चन्दामामा
माँ - बच्चों का मासिक पत्र

Photo by S. N. Somant

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

'जो डाली पर सो खट्टे!'

प्रेषक:
श्री आलोक अरोड़ा, लखनऊ

शुभ समाचार !

चन्दामामा

समुदाय के

नवम्बर १९५६ के सभी अंक

दीपावली विशेषांक

के रूप में प्रकाशित होंगे, जिनमें :

★ मनोरंजक कहानियाँ

★ हँसी-मज़ाक और व्यंग्य

★ आह्लादपूर्ण शीर्षक

★ कलात्मक तिरंगे चित्र और अन्य सामग्री

विविध रंगों में प्राप्त होगी !

इसकी पृष्ठ संख्या ८० होगी और मल्टीकलर आकर्षणीय मुखचित्र होगा !

दाम : ८ आने

एजेण्टों से प्रार्थना है कि वे अपने आर्डर हमें शीघ्र भेज दें।

पाठक अपनी प्रति अपने एजेण्ट के यहाँ सुरक्षित करा लें, अथवा सीधे हमें चन्दा भेजकर ग्राहक बनें।

पाठक इस विशेषांक के लिए कविता और कार्टून भेज सकते हैं।

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, मद्रास-२६.

चन्दामामा

सितम्बर १९५६

अब भारत भर में
प्रदर्शित किया
जा रहा है।

संगीत
सी. रामचन्द्र

निर्देशन
पट्टण्णा

जेमिनी रिलीज़

नारायणन कंपनी चित्र

"अहा, इतने साफ़ चित्र!
आपके पास ज़रूर कोई
क़ीमती कैमरा होगा!"

"जी नहीं, मेरे पास तो
सिर्फ़ 'ब्राउनी' कैमरा ही है,
लेकिन मैंने कोडक
'प्लस-एक्स' फ़िल्म
इस्तेमाल की थी। इस पर
चित्र एकदम साफ़ आते हैं!"

कोडक 'प्लस-एक्स' फ़िल्म पर चित्र बहुत ही साफ़ और सुन्दर खिंचते हैं। साथ ही, इसके छोटे नेगेटिवों पर से बढ़िया एन्लार्जमेन्ट भी तैयार किये जा सकते हैं।

सुन्दर चित्रों के लिए आप 'कोडक' फ़िल्म पर हमेशा ही पूरा भरोसा रख सकते हैं। ऐन वक्त पर फ़िल्म कम पड़ जाने से बहुत ही तकलीफ़ होती है, इसलिए अपने कोडक विक्रेता से हमेशा दो रोल खरीदिए—एक इस्तेमाल के लिए और दूसरा बचाकर रखने के लिए।

कोडक लिमिटेड (इंग्लैंड में सम्बद्ध कंपनी के सदस्यों का दायित्व सीमित है)
बम्बई – कलकत्ता – दिल्ली – मद्रास

डोंगरे
बालामृत
के. टी. डोंगरे एन्ड कम्पनी
प्राइवेट लिमिटेड, बम्बई - ४

यह लो तुम्हारा
अशोका
अशोका पेन वर्क्स
तेनाली
आन्ध्र

ENERGY FOOD

BISCUITS

इनर्जी फूड बिस्कुट ताज़े, स्वादिष्ट और विटामिनों से भरपूर होते हैं और बच्चों को तन्दुरुस्त और ताक़तवर बनाते हैं।

जे. वी. मंघाराम एण्ड कम्पनी, ग्वालियर.

चन्दामामा

संपादक : चक्रपाणी

भारत के जन जीवन में त्यौहारों का महत्वपूर्ण स्थान है और हर त्यौहार के बारे में लम्बी लम्बी कहानियाँ प्रचलित हैं, जो प्रायः रोचक होती हैं।

हम इस प्रकार की कई कहानियाँ "चन्दामामा" में समय समय पर प्रकाशित करते रहते हैं। उन कहानियों में हमारे पाठक दिलचस्पी भी दिखाते हैं।

भारतीय त्यौहारों का सम्बन्ध धर्म से अधिक है। क्योंकि हम स्वभावतः धार्मिक हैं। अतः हम त्यौहारों को सर्वत्र सोत्साह मनाते हैं।

कहा जाता है कि हिन्दू धर्म व्यक्तिवाद का पोषक है। पर त्यौहारों में, व्यक्ति अपने सामूहिक रूप को व्यक्त करता है। वैयक्तिक कर्तव्य ही सामाजिक धर्म बन जाता है। हमारा यहाँ संकेत धर्म के नाम पर प्रचलित कुरीतियों और अंध विश्वासों की ओर नहीं है।

इस मास में "विनायक चतुर्थी" का त्यौहार पड़ता है। इस त्यौहार को बच्चे विशेष चाव से मनाते हैं। आप भी मनाएँगे न?

अंक : १

सितम्बर १९५६

वर्ष : ८

मुख - चित्र

सैन्धव द्रौपदी को जबरदस्ती रथ में चढ़ाकर ले जा रहा था, तो जंगल में शिकार खेलते हुए पांडवों को अपशकुनों का भान हुआ। शिकार से वापस आने पर, उनको सारी बात मालूम हो गई।

तुरन्त पांडव अपने अपने रथों पर चढ़कर पीछा करते करते सैन्धव की सेनाओं के पास पहुँचे। पाण्डवों में और सैन्धव की सेना में भयंकर युद्ध हुआ।

सैन्धव जान गया कि वह जरूर हारेगा। द्रौपदी को रथ से उतार कर, वह स्वयं रथ लेकर रफू चक्कर हो गया।

इस बीच में, पाण्डव ने सैन्धव की सेना को तहस नहस कर दिया। भीम और अर्जुन ने सैन्धव की खोज की, पर यह जानकर कि वह भाग गया है, वे रथ में चढ़कर उसका पीछा करने के लिए निकले। तब धर्मराज ने कहा—"चाहे तुम सैन्धव का कुछ भी करो; पर उसे मारना नहीं।"

थोड़ी दूर जाने के बाद, उन्हें सैन्धव का रथ दिखाई दिया। उन्होंने दूर से रथ के घोड़ों को अपने बाणों का निशाना बनाया। रथ छोड़कर सैन्धव पैदल भागना शुरू किया। वह जल्दी ही उनके हाथ में आ गया। भीम जब उसको चीरने फाड़ने लगा, तो अर्जुन ने उसको बड़े भाई की बात याद दिलाई।

भीम ने सैन्धव की चोटी पकड़कर कहा—"अरे नीच! जहाँ कहीं भी तू जाये, यह कहता फिरना कि तू पाण्डवों का दास है। अगर यह वचन देगा तो तुझे जिन्दा छोड़ दूँगा।" डर के कारण सैन्धव यह मान गया।

इतना अपमानित होने के बाद, हिमालय जाकर, सैन्धव ने घोर तपस्या की। शिव ने प्रत्यक्ष होकर कहा—"क्या वर चाहते हो, माँगो" सैन्धव ने कहा—"मुझे आप ऐसा वर दीजिये कि पाँचों पाण्डव मेरे हाथ पराजित हों।" शिव ने कहा—"अरे मूर्ख! मैंने पहिले ही अर्जुन को पाशुपतास्त्र दे रखा है। उसे कोई नहीं जीत सकता। बाकी चार, कभी न कभी तुम्हारे हाथ पराजित होंगे—यह वर मैं तुम्हें देता हूँ। जाओ।"

अधन्नी का अंजाम

पाटलीपुत्र में एक गरीब कहार रहा करता था। वह पानी ढोकर जीवन निर्वाह किया करता था। उसका बसेरा नगर के उत्तर द्वार के पास था। दक्षिण द्वार के पास एक स्त्री रहा करती थी। वह भी पानी के कलश ढोकर रोज़ी किया करती थी। उन दोनों में प्रेम हो गया और उन्होंने आपस में विवाह कर लिया।

विवाह तो हो गया था पर दोनों शहर के दो सिरों में रहते थे। इसलिये वे एक दूसरे को अवसर देख न पाते थे।

एक दिन एक त्योहार आया। कहार अपना काम जल्दी खतम करके, दक्षिण द्वार के पास रहनेवाली अपनी पत्नी को देखने गया।

"आज हम त्योहार मनायेंगे। मेरे पास एक अधन्नी है। तुम्हारे पास कितने पैसे हैं?"—पत्नी ने अपनी अधन्नी दिखाते हुए पति से पूछा।

"मेरे पास भी अधन्नी है। उसको मैंने उत्तर द्वार की दीवार के एक गढ़े में, होशियारी से रख रखा है।"

"काफ़ी है। उसमें से एक पैसे के फूल खरीदे जायें और एक पैसे से चन्दन। और बाकी अधन्नी से खीर बनाकर खाई जाय।"—पत्नी ने कहा।

यह सुन पति बड़ा खुश हुआ। यह सोच कि वे भी त्योहार मना रहे थे, वह फूला न समाता था। "मैं उत्तर द्वार के पास जाकर अधन्नी ले आता हूँ"—उसने पत्नी से कहा। वह द्वार की ओर चल पड़ा।

कड़ी दुपहरी थी। आसमान आग बरसा रहा था। नीचे रास्ते में रेत भी आग हो रही थी। परन्तु वह गरीब इतना

श्रीमती मंजुला

खुश था कि न उसे धूप ही लग रही थी, न उसके पैर ही जल रहे थे। वह उछलता कूदता, उत्तर द्वार की ओर जा रहा था।

दोनों द्वारों के बीच में राजा का महल पड़ता था। राजा ने ऊपर की मंज़िल से, उसको धूप और तपन की परवाह न कर, गाते-नाचते, उछलते, जाते गरीब पानी ढोनेवाले को देखा। राजा को उसे देखकर आश्चर्य हुआ। उसने जानना चाहा कि वह क्यों इतना प्रसन्न था। उसने नौकरों को बुलाकर कहा—"वह जो गाता गाता जा रहा है, उसे मेरे पास ले आओ।"

सैनिकों ने उसके पास आकर कहा—"तुम्हें राजा बुला रहे हैं। चलो।"

"राजा से मुझे क्या काम? मैं उन्हें नहीं जानता।" अपने रास्ते पर बढ़ते हुए पानी ढोनेवाले कहार ने कहा।

सैनिक, उसको जबरदस्ती खींचते खींचते राजा के पास ले गये। राजा ने उसे देखकर पूछा—"ऊपर सिर जल रहा है, और नीचे पैर और तुम कहाँ बेपरवाह भागे जा रहे हो?"

"हुज़ूर! क्योंकि मेरे दिल में इससे अधिक गरम इच्छा है, इसलिए ये धूप

और तपन मुझे नहीं सताते।" पानी ढोनेवाले गरीब ने कहा।

राजा हैरान था कि वह इच्छा क्या हो सकती है। उसने पूछा "वह क्या इच्छा है!"

"हुज़ूर, आज त्यौहार है। मेरी पत्नी के पास अधन्नी है। मैंने उत्तर द्वार में, दीवार में एक अधन्नी छुपा रखी है। दोनों की अधन्नी मिलने से एक आना होगा। उसमें से एक पैसे के फूल, एक पैसे का चन्दन और अधन्नी से खीर बनाकर, मज़े में हम त्यौहार मनाएँगे। इसीलिए मैं जा रहा था। मुझे उत्तर द्वार से अपनी अधन्नी लेकर दक्षिण द्वार की ओर आना है। तब हम मिलकर त्यौहार मनाएँगे। मुझे जल्दी जाने दीजिये।" गरीब ने कहा।

यह सुन राजा को बहुत आश्चर्य हुआ।

"अब जितना चले हो, उत्तर द्वार तक पहुँचने के लिए उतना और चलना पड़ेगा। फिर दक्षिण द्वार तक जाने के लिए इससे दुगना चलना पड़ेगा। क्यों इतनी दौड़धूप करते हो! मैं अधन्नी देता हूँ। जाकर त्यौहार मनाओ।" राजा ने कहा।

"अच्छा हुज़ूर! आपकी अधन्नी ले लूँगा। और अपनी भी ले आऊँगा।"—

पानी ढोनेवाले कहार ने कहा। "उस अपली की क्यों फ़िक्र करते हो! चाहते हो तो चवन्नी दे दूँगा। जिस रास्ते से आये हो, उसी रास्ते चले जाना।"—राजा ने कहा।

"अच्छा हुज़ूर! तो चवन्नी दिलवाइये। मैं अपनी अपली भी लेकर वापिस चला जाऊँगा।"—गरीब ने कहा।

राजा ने ज़िद पकड़ी। उसने देखना चाहा कि वह कितना देने पर अपनी अपली छोड़ता है। रुपया देने के लिए कहा, फिर बढ़ते बढ़ते वह रकम एक लाख रुपये तक चढ़ी, पर गरीब ने अपनी अपली की हट न छोड़ी। वह गिड़गिड़ाने लगा कि उसे अपनी अपली लाने दिया जाय।

आखिर राजा ऊब गया। उसने कहा—"अगर तुम अपनी अपली लेने न गये तो मैं तुम्हें आधे नगर का राजा बना दूँगा। कहो, क्या कहते हो!"

"अच्छा, तो ऐसा ही कीजिये।"—पानी ढोनेवाले ने कहा।

तुरन्त राजा ने मन्त्री को बुलाकर हिदायत की—"इसको आधे नगर का राजा बनाते हुए एक घोषणा तैयार कीजिये।"

नगर को मन्त्री ने दक्षिण और उत्तर के भागों में विभाजित किया। 'तुम कौन-सा भाग चाहते हो, बताओ! उसके अनुसार मन्त्री घोषणा करवा देंगे।"—राजा ने कहा।

"अच्छा, हुज़ूर! मुझे उत्तर का भाग ही दिलवाइये"—पानी ढोनेवाले ने कहा। सब जानते थे कि उत्तर द्वार में रखी अपली के लिए ही उसने यह भाग माँगा था।

राजा ने अपने वचन के अनुसार गरीब पानी ढोनेवाले कहार को नगर के उत्तर भाग का राजा बना दिया। परन्तु लोग उसको "अपली का राजा" कहकर ही पुकारा करते थे।

अन्ध विश्वास

जब ब्रह्मदत्त काशी का राजा था, तब बोधिसत्व ने उसके लड़के के रूप में जन्म लिया। ब्रह्मदत्त ने उनका नाम ब्रह्मदत्त कुमार रखा। कुमार ने सोलहवें वर्ष की आयु से पहिले ही, तक्षशिला में, वेद, वेदांग, उपनिषद आदि, का अध्ययन कर लिया था। जब वे अध्ययन समाप्त करके आये तो राजा ने उन्हें युवराज बनाया।

उस ज़माने में, काशी में कई प्रकार के मेले लगा करते थे और उन मेलों में लोग भेड़-बकरियों की बलि दिया करते और उनके रक्त से देवताओं पर नैवेद्य चढ़ाया करते। युवराज, जनता का यह अन्ध-विश्वास और दुराचार देखकर बहुत दुःखित हुए। उन्होंने निश्चय किया—"जब मैं राजा बनूँगा तो इन अन्ध-विश्वासों को दूर कर दूँगा।" फिर उन्होंने अपने निश्चय को इस प्रकार कार्यान्वित किया:

काशी नगर से बाहर एक बड़ का पेड़ था। लोगों का विश्वास था कि उस पेड़ पर एक देवता रहा करता था। वे तरह तरह की मनौतियाँ किया करते। उनका ख्याल था कि वह देवता भक्तों की अनेक इच्छाओं को पूरी करता था।

एक दिन रथ पर चढ़कर ब्रह्मदत्त कुमार नगर के बाहर बड़ के पेड़ के पास गये। उस पेड़ के चारों ओर कई भक्त—स्त्री, पुरुष भक्तिपूर्वक प्रदक्षिणा कर रहे थे। पेड़ से कुछ दूरी पर ही, युवराज रथ पर से उतर गये और पेड़ पर फूल चढ़ाकर, उन्होंने भी तीन बार पेड़ की प्रदक्षिणा की। फिर वे रथ पर चढ़कर नगर वापिस चले गये। वे तब से नियमपूर्वक उस पेड़ के पास जाते और पेड़ की पूजा कर उसकी प्रदक्षिणा किया करते।

कुछ दिनों बाद, बूढ़े राजा की मृत्यु हो गई। ब्रह्मदत्त कुमार काशी राज्य के राजा बने। जनता के अन्ध विश्वासों को ख़तम करने का अब उन्हें मौका मिला।

राज्याभिषेक के बाद उन्होंने एक सभा बुलायी और उसमें यों कहा:

"यहाँ उपस्थित सभी सज्जन सावधान होकर सुनें। आप यह जानते ही होंगे कि जब मैं युवराज था, तब मैं शहर से बाहर बड़ के पेड़ की पूजा करने जाया करता था। मेरी युवराज बनने की इच्छा में और पेड़ की प्रदक्षिणा करने में, पारस्परिक सम्बन्ध है। मैंने मनौती की थी कि यदि मैं राजा बन गया तो मैं हज़ार पशुओं की बलि दूँगा। अब मेरी इच्छा पूरी हो गई है। इसलिए बलि देनी ही होगी। इसके लिए आवश्यक प्रबन्ध करवाइए।"

यह सुनते ही सभासद बहुत प्रसन्न हुए। मन्त्रियों ने कहा—"महाराज! आप यह बतायें कि किन पशुओं की आप बलि देना चाहते हैं?"

"मैंने बलि देने के लिए पशुओं के बारे में नहीं सोचा था। पर मेरा मतलब देवताओं को पशु बलि देनेवाले मनुष्यों से था। बलि देनेवाले हज़ार मनुष्यों को इकट्ठा कीजिये। आप यह घोषणा करवा दीजिये कि जो कोई देवताओं को बलि चढ़ायेगा, वह स्वयं बड़ के पेड़ पर बलि चढ़ा दिया जायेगा।"—राजा ने कहा।

सभासद यह सुन भौंचक्के रह गये। क्यों कि सब को बलियों पर विश्वास था, इसलिए वे कुछ कह न पाये। राजा की इच्छा के अनुसार राज्य में ढिंढोरा पीटा गया। तब जादू की तरह बलि देने की प्रथा एकायक समाप्त हो गई।

[१४]

[शिवदत्त और मन्दरदेव की नौकाएँ रात के समय एक द्वीप में पहुँचीं। न जाने कहाँ से कोई पत्थर आकर एक सैनिक को लगा। मन्दरदेव ने जिस तरफ़ से पत्थर आया था उस तरफ़ बाण छोड़ा। तुरंत एक भयंकर आवाज़ सुनाई दी। अगले दिन सवेरे उनको आस पास पेड़ पत्तों पर खून की बूँदें दिखाई दीं। बाद में...]

शिवदत्त और मन्दरदेव की तरह सैनिक भी पत्तों पर खून के धब्बे देखकर घबरा गये। सब को यह समझने में देर न लगी कि जो भयंकर आवाज़ उनको रात में सुनाई दी थी, वह हो न हो, किसी आदमी की ही हो सकती थी।

खून को ग़ौर से देखते हुए शिवदत्त ने कहा—"यह ज़रूर मनुष्य का खून है। जैसा मैंने अनुमान किया था, वह आदमी मरा नहीं है सिर्फ़ घायल हुआ है। इसमें भी सन्देह नहीं कि वह यहाँ से भाग गया है। फिर भी अच्छा है कि हम आस पास की झाड़ियों में उसे ढूँढें वरना हमारे लिए आगे बढ़ना खतरे से खाली नहीं है।"

मन्दरदेव और तीन सैनिक एक तरफ़ गये, शिवदत्त और बाकी सैनिक दूसरी तरफ़। मन्दरदेव थोड़ी दूर गया था कि उसे झाड़ियों में कोई आहट सुनाई दी। यह सोच कि जिस दुश्मन को वह खोज रहा था, वह मिल गया है, वह आगे कूदा।

परन्तु वह आवाज़ मनुष्य की न थी। जंगली सूअर की थी। वह चीखता हुआ मन्दरदेव को अपने दाँतों से घायल करने के लिये झाड़ी में से बाहर निकला। मन्दरदेव चौंका। उसके दाँतों से बचकर अपनी तलवार से उसने उसे मारा। सूअर ज़ख्मी हो गया। पीछे हटकर वह फिर मन्दरदेव की ओर लपका, इस बीच में मन्दरदेव के सैनिकों ने उसे मारा-काटा। वह कराहता हुआ वहीं ठंडा हो गया।

शिवदत्त के सैनिक भी उस तरफ़ भागे भागे आये। उनको, कराहते सूअर के पास मन्दरदेव खड़ा दिखाई दिया। "आपका शोर-शराबा सुनकर मैंने समझा कि वह आदमी मिल गया है और आप आफ़त में हैं। इसलिये भागा भागा आया हूँ।"—शिवदत्त ने मुस्कराते हुए कहा।

"बिना खोजे ही खाने को मिल गया है। रात में हम पर जिसने झाड़ियों के पीछे से पत्थर फेंके थे, उसके बारे में, बाद में देखा जा सकता है। पहिले हमको अपनी भूख मिटाना ज़रूरी है।" मन्दरदेव ने कहा।

सैनिक ईन्धन चुन कर लाने के लिये इधर उधर चले गये। मन्दरदेव और शिवदत्त-

दोनों आग तैयार कर रहे थे। तब उन्हें दूरी पर, कोई भयंकर आर्तनाद सुनाई दिया। उनके कान फूटते फूटते बचे।

आर्तनाद सुनते ही मन्दरदेव और शिवदत्त झट तलवार लेकर उस तरफ़ भागे जिस तरफ़ आर्तनाद हो रहा था। थोड़ी दूर जाने पर, उन्होंने जो भयंकर दृश्य देखा, तो भय और आश्चर्य के कारण उनमें कंपकपी भी पैदा हो गयी।

इस बीच में "वन-मानुस! वन-मानुस!" चिल्लाते चिल्लाते कुछ सैनिक उनकी ओर भागते भागते आये। बात यह थी कि जब एक सैनिक लकड़ियाँ चुन रहा था तो किसी ने पीछे से आकर उसका गला घोंट दिया। डर के मारे वह सैनिक ज़ोर ज़ोर से चिल्लाने लगा।

"यह ज़रूर वन-मानुस है, इसमें कोई सन्देह नहीं" यह सोचकर मन्दरदेव, उस भयंकर प्राणी की ओर बढ़ा ही था कि शिवदत्त ने उसे रोकते हुए पीछे से कहा—"ठहरो मन्दरदेव।" वह वन-मानुस, जिसने सैनिक का गला दबोच रखा था, पीछे हटकर भागने की कोशिश करने लगा। तुरन्त तीनों सैनिक उस पर झपट

पड़े और जंगली बेलों से उसके हाथ-पैर बांध दिये।

"यह बन-मानुस नहीं है, यह सौ फ़ीसदी मनुष्य है। किसी बदनसीबी के कारण इसकी यह हालत हो गयी है।"— शिवदत्त ने कहा।

तुरन्त एक सैनिक ने आश्चर्य से कहा— "शिवदत्त! देखिये, इसके बायें हाथ में चोट लगी है और घाव से खून बह रहा है।" वह सैनिक चील पड़ा।

मन्दरदेव ने झुककर उस भयंकर प्राणी को देखा। "शिवदत्त! रात में इसी ने हम पर पत्थर फेंके थे। देखो, मेरा बाण, इसको इस हाथ पर लगा था। आप ठीक कहते हैं, यह बन-मानुस नहीं, मनुष्य ही है।"

इतने में वह भयानक प्राणी कराहने लगा—"मैं भी तुम जैसा मनुष्य हूँ। इस भयंकर द्वीप में बारह साल से अकेला रहता रहता ऐसा हो गया हूँ।"

"तुम्हारा नाम क्या है? तुम्हें क्यों इस द्वीप में बारह वर्ष रहने की नौबत आई?"— शिवदत्त ने उससे पूछा।

शिवदत्त के प्रश्नों को सुनने से, ऐसा लगता था, जैसे वह कुछ याद करने की कोशिश कर रहा हो। वह थोड़ी देर चुप रहकर, यों कहने लगा :

"हुज़ूर, मेरा नाम वज्रमुष्टि है। मैं श्रमन द्वीप का रहने वाला हूँ। जब मैं अठारह साल का हुआ तो समुद्रकेतु नाम के ज़ालिम समुद्री चोर के नीचे काम करने लगा। समुद्र में जानेवाली नौकाओं को और किनारे के गाँवों को लूटना हमारा काम था। मैं उसके साथ रहकर इस तरह का जीवन निर्वाह करता रहा। फिर हम दोनों में मनमुटाव हो गया। तब वह मुझे इस द्वीप में अकेला छोड़ गया।"

"तू शमन द्वीप का रहनेवाला है!"— वज्रमुष्टि की बातें सुनकर शिवदत्त ने आश्चर्य से पूछा। शमन द्वीप के नाम से, शिवदत्त को शाक्तेय की, चान्दी के नन्दी देवालय के बनाने के लिए दूसरे देशों पर हमला करने की बात याद हो आयी। शमन द्वीप कहाँ है! इस समय उस द्वीप का कौन राजा है! शिवदत्त ने सोचा कि इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर वज्रमुष्टि से पाया जा सकता था। पर फिर उसने सोचा कि उस पूछताछ के लिए वह उपयुक्त समय न था। वे फिलहाल यही जानना चाहते थे कि वे किस द्वीप में थे और उस द्वीप की क्या हालत है।"

"वज्रमुष्टि! तुम इस द्वीप में बारह साल से रह रहे हो न! शायद तुम यहाँ रहनेवालों के बारे में कुछ जानते हो और उनके तौर तरीकों से भी अच्छी तरह वाकिफ़ हो!"—शिवदत्त ने कहा।

वज्रमुष्टि ने उदास हो सिर हिला दिया। "हुज़ूर! यद्यपि मैं इस द्वीप में बारह साल से रह रहा हूँ, तो भी मैं इस द्वीप के बारे में अधिक नहीं जानता हूँ। भोजन ढूंढते ढूंढते क्रूर जन्तुओं से बचते बचते ही, मैंने ये

बारह साल बिता दिये। इसी दौड़-धूप में कई मुसीबतें झेलीं और समय वैसे ही गुज़र गया। एक दो बार मैंने ज़रूर समुद्रकेतु के चोरों को इस तरफ़ से जाते हुए देखा था। इसके सिवाय उनके बारे में मैं और कुछ नहीं जानता।"

"इस द्वीप में क्या कभी तुमने किसी आदमी को नहीं देखा"—शिवदत्त ने अचम्भे से पूछा।

वज्रमुष्टि ने कुछ याद करते हुए सिर हिलाया। "इन बारह वर्षों में मैंने चार पाँच बार ही आदमियों को देखा है।

ये बहुत हट्टे-कट्टे हैं। अच्छे शिकारी हैं। सिर पर सींग धारण करते हैं। पर वे शायद यहाँ कहीं नहीं रहते। शिकार करते करते ये कहीं चले जाते हैं।"— उसने कहा।

शिवदत्त मन्दरदेव की ओर देखने लगा। मन्दरदेव ने हँसकर कहा— "शिवदत्त! फ़िलहाल तो हमें इस द्वीप में रहना ही होगा। इसके अलावा दूसरा कोई चारा नहीं है। इसलिए आस पड़ोस का इलाका देखकर मालूम किया जाय कि यह कैसी जगह है। अन्धेरे से पहिले ही यह काम हो जाना चाहिए। फिर धूप-पानी से बचने के लिए छोटी छोटी कुटियाएँ बनाई जा सकती हैं।"

शिवदत्त भी यह सुझाव मान गया। फिर उसने सैनिकों की तरफ़ मुड़कर कहा—"वज्रमुष्टि को छोड़ दो।" सैनिकों ने जंगली बेलें काट दीं। तब वज्रमुष्टि ने बड़े विनीत भावसे हाथ जोड़कर शिवदत्त से कहा—"अब मैं कहाँ जाऊँ! मुझे भी अपने साथ रखियेगा। मैं भी भक्तिभाव से आपकी सेवा करूँगा। आपके बताये मार्ग पर चलूँगा।"

शिवदत्त ने अपने सैनिकों की ओर देखा। उन सब ने स्वीकृति जताने के लिए अपने हाथ उठाये। दो चार सैनिकों ने, वज्रमुष्टि के पास जाकर, स्नेह से उसके कन्धे थपथपाये।

"पहिले भूख मिटानी है। बाद में आसपास घूमकर मालूम करेंगे कि इस द्वीप की क्या हालत है और किस तरह के लोग यहाँ रह रहे हैं।"—मन्दरदेव ने कहा।

शिवदत्त की भी यही राय थी। सैनिकों की लाई हुई लकड़ियों को लेकर आग जलाई गई। मारे हुए सुअर को घसीटकर

सैनिकों ने आग में डाल दिया। भुनते हुए सूअर की ओर थोड़ी देर देखने के बाद वज्रमुष्टि ने कहा—"यह एक छोटा सूअर हम सब की भूख मिटाने के लिए काफ़ी नहीं होगा। अगर आप की इजाज़त हो तो मैं जाकर पाँच छः मिनट में दो चार जानवर और मार लाऊँगा।"

मन्दरदेव और शिवदत्त ने उसको इजाज़त दे दी। वज्रमुष्टि के साथ दो सैनिक भी धनुष बाण लेकर निकले। थोड़ी दूर आने के बाद उनको दो-तीन हरिण घास खाते दिखाई दिये। सैनिकों ने उन्हें मारने के लिए धनुष पर बाण चढ़ाये। वज्रमुष्टि ने उन्हें रोकते हुए कहा—"इन छोटे जन्तुओं पर क्यों फ़ाल्तू अपने बाण ख़राब करते हो? तुम यहीं ठहरो। मैं काम पूरा किये देता हूँ।" यों कह वह पेड़ों की आड़ में से धीमे धीमे चला।

सैनिक भी चुपचाप वज्रमुष्टि के पीछे पीछे चले। कुछ दूर जाने के बाद, हरिणों के पासवाले पेड़ पर बिल्ली की तरह वज्रमुष्टि चढ़ने लगा। सैनिकों को मालूम न था कि वह क्या करने जा रहा था। वे अचरज से उसकी तरफ़ देख रहे थे।

वज्रमुष्टि हरिणों के ऊपरवाली टहनी पर साँप की तरह रेंगता रेंगता पहुँच गया और मौका देखकर एकायक घास खाते हुए हरिणों पर वहाँ से कूद पड़ा।

चुटकी भर में हरिण वहाँ से नौ दो ग्यारह हो गये। पर उनमें से एक वज्रमुष्टि के हाथ में फँस गया था और छूटने के लिए छटपटा रहा था। वज्रमुष्टि ने उस हरिण को अपने कन्धे पर आसानी से डालते हुए कहा—"इन बारह सालों में मैंने अपना भोजन इसी तरह पाया है। बरछे, बाण, मेरे पास थे नहीं, जो उन्हें बरतता। खाली

हाथ ही मुझे एक दो बार शेर और भालू से लड़-झगड़ कर जान बचानी पड़ी।"

वज्रमुष्टि के बल और चालाकी को देखकर सैनिकों को बहुत आश्चर्य हुआ। उस पाँच फुट के नाटे, छोटे पैर, छोटे हाथवाले आदमी में इतनी ताकत हो सकती है, इसकी कभी कल्पना भी उन्होंने न की थी।

थोड़ी देर बाद सब मिलकर शिवदत्त के पास गये। जब सैनिकों ने यह सुनाया कि वज्रमुष्टि ने हरिण कैसे पकड़ा था तो शिवदत्त को भी बहुत आश्चर्य हुआ।

मन्दरदेव, जहाँ बैठा था, वहाँ से उठकर वज्रमुष्टि के पास गया। उसकी बाँह पकड़ कर उसने कहा—"वज्रमुष्टि! हमारा सौभाग्य है कि तुम हमें मिले। जिस प्रकार तुम्हें समुद्रकेतु ने दग़ा दिया है, उसी प्रकार नागवाहन ने भी मुझे भी धोखा दिया है। इसलिए हमें कभी यह न भूलना चाहिए कि हम दोनों को बदला लेने के लिए जीवित रहना चाहिये।"

"मन्दरदेव ने जो कहा है, ठीक है। तुम्हें हमारा अनुयायी होना ही चाहिये। इस द्वीप में यदि हमें किसी संकट का सामना करना पड़ा, तो मुझे आशा है, तुम हमारी जरूर मदद करोगे। मुझे विश्वास है कि तुम कभी न कभी उस समुद्री डाकू, समुद्रकेतु से, जिसने तुम्हें यहाँ बारह साल से रख रखा है, बदला ले सकोगे"—शिवदत्त ने कहा।

"हुजूर! आपका कहना ठीक है। मैं भी उसी दिन की प्रतीक्षा कर रहा हूँ!"—वज्रमुष्टि का यह कहना था कि समुद्र के किनारे से भयंकर चीत्कार सुनाई देने लगा। सब चौंककर उस तरफ़ देखने लगे।

[अभी और है]

प्रतीकार

विक्रमार्क ने ज़िद न छोड़ी। वह फिर पेड़ के पास गया। शव को उतार कर, कन्धे पर डाल, चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा! भानुदत्त ने भी अपनी ज़िद छोड़ दी थी, पर तुम छोड़ने का नाम नहीं लेते। उसकी कहानी सुनने पर शायद तुम अपनी ज़िद छोड़ दोगे। सुनो:"

किसी ज़माने में, हिमालय की तलहटी में मणिमन्त नाम का एक छोटा राज्य था। नन्दिकेतु उस राज्य का सेनापति था। उसके बल-पराक्रम के कारण शत्रु मणिमन्त पर आक्रमण करने का साहस नहीं कर पाते थे। राजा भी सेनापति की ही सलाह पर सब कुछ किया करता।

बेताल कथाएँ

नन्दिकेतु की पुष्पावती नाम की एक लड़की थी। वह बहुत सुन्दर थी। उससे विवाह करने के लिए कई राजकुमार उतावले हो रहे थे। परन्तु पुष्पावती भानुदत्त नाम के युवक से प्रेम किया करती थी। भानुदत्त सुन्दर तो था ही वह बड़े घराने का भी था। उसका पिता एक सामन्त था।

जब नन्दिकेतु को यह मालूम हुआ कि उसकी लड़की, जो राजकुमारों से शादी कर सकती थी, एक सामन्त के लड़के को प्रेम कर रही है तो उसे बड़ा गुस्सा आया। उसने तुरत राजा के पास जाकर कहा—"महाराज! भानुदत्त देश द्रोही है। उसे तुरत देश निकाला दे दीजिये।" राजा ने इसका कारण भी न पूछा। इसके लिए वे मान गये। ६० घड़ी में उसे देश छोड़कर जाने की आज्ञा हुई।

भानुदत्त बड़ा स्वामिभक्त था। उसने सोचा कि देश निकाले से अच्छी मौत है। परन्तु व्यर्थ क्यों मरा जाय! उसने सोचा कि नन्दिकेतु को, जिसके कारण उसका इतना अपमान हुआ था, मारकर क्यों न मरा जाय! बदला लेने के लिए वह उस रात को छुरा-छुरा, नन्दिकेतु के सोने के

कमरे में घुसा। पर तलवार भोंकने से पहिले उसे पुष्पावती याद आई। उसे ख्याल आया कि नन्दिकेतु के मारने से पुष्पावती को दुःख होगा। इसलिये भानुदत्त वापिस लौट गया। सवेरा होते होते, वह अपना देश छोड़कर पास के राज्य के पुलिन्द नगर में चला गया।

पुलिन्द का राजा था तो कमज़ोर, पर उसमें दूसरों के राज्य हड़पने की इच्छा जरा प्रबल थी। मणिमन्त द्वारा बहिष्कृत व्यक्तियों को वह आश्रय देता और उनको बड़े बड़े ओहदों पर नियुक्त करता ताकि मौका पड़ने पर वे काम में आ सकें। अब उसको मालूम हुआ कि भानुदत्त उसके राज्य में आया है तो उसने उसे बुलाकर उसका खूब स्वागत किया और उसके आराम से रहने के लिए सब ज़रूरी प्रबन्ध करवा दिये।

दो तीन वर्ष बीत गये। पर भानुगुप्त बिलकुल न बदला। वह अपना अपमान भी न भूल पाया। पुष्पावती पर तो शायद उसका प्रेम कम हो गया था। पर नन्दिकेतु को मारने की इच्छा और भी बढ़ गई थी।

और पुलिन्द का राजा तो इस ताक में था ही कि भानुदत्त के मन में कैसे बदले की

भावना जगाई जाय। उसने एक दिन भानुदत्त से कहा—"मित्र! मैं तुम्हें कष्ट सहता देख नहीं पाता हूँ। जितनी सेना तुम चाहो मैं तुम्हारे साथ भेज सकता हूँ। जाकर अपने शत्रु नन्दिकेतु को मार डालो और चाहो तो मणिमन्त राज्य को ही कब्जे में कर लो। क्योंकि तुम उस राज्य की हालत से भलीभांति परिचित हो, इसलिये थोड़ी सेना से ही उसे जीत सकते हो।"

नन्दिकेतु का नाम सुनते ही भानुदत्त दांत कटकटाने लगा। उसने कहा "न मुझे राज्य चाहिए न कुछ और ही। मुझे दो ही दो चीज़ें चाहिये—एक नन्दिकेतु और दूसरी उसकी लड़की।"

"जैसी तुम्हारी मर्ज़ी।" पुलिन्द के राजा ने कहा। उसने भानुदत्त को भेजकर अपने सेनापति को बुलवाया। "अच्छे से अच्छे साठ योद्धाओं को चुनकर भानुदत्त के साथ भेज दो। उनमें उन सब को शामिल कर दो जो मणिमन्त के यहाँ से आये हुए हैं। उनको लेकर पहिले भानुदत्त नन्दीकेतु को मार देगा और इस बीच में तुम अपनी सेनाओं को मणिमन्त के राज्य में ले जाओ। नन्दिकेतु के मर जाने से उसकी सेना में अराजकता फैल जाएगी। हमारे योद्धा राजमहल पर और सैनिकों की छावनी पर कब्जा करलेंगे। समझे"—राजा ने कहा और सेना नायक ने स्वीकृति में सिर हिला दिया।

अगले दिन साठ योद्धा भानुदत्त के पास गये। उन्होंने कहा—"आपकी मदद के लिए हमें राजा ने आपके पास भेजा है। आप जो कहेंगे हम करेंगे।"

भानुदत्त बड़ा खुश हुआ। नन्दिकेतु को मारने का उसे मौका मिल रहा था। इसलिये वह सोचने लगा कि उन योद्धाओं का कैसे उपयोग किया जाय। उनमें से कई

उसी की तरह देश से बहिष्कृत थे। वे मणिमन्त राज्य का कोना कोना जानते थे।

निश्चय हुआ कि सब मिलकर मणिमन्त की ओर कूच करें। उन्होंने साथ अच्छे हथियार भी ले लिये। भानुदत्त के साथ जाते हुए योद्धाओं में से कई ने कहा कि अब हमारा बहिष्कार समाप्त हो रहा है; हम फिर से मणिमन्त में रहने लगेंगे।

"वह कैसे!"—भानुदत्त ने पूछा।

"आज रात नन्दिकेतु मार दिया जायेगा और कल सवेरे पुलिन्द की सेनाएँ मणिमन्त में चली आएँगी। क्या आप नहीं जानते यह!—" उन्होंने पूछा।

भानुदत्त को यह सुन बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने सोचा था कि पुलिन्द, नन्दिकेतु का बदला लेने के लिये उसकी मदद कर रहा था। उसने कभी ख्वाब में भी न सोचा था कि मणिमन्त को आसानी से जीतने के लिये वह उसकी सहायता कर रहा था।

आधी रात के समय भानुदत्त और साठ योद्धा, मणिमन्त के किले के पास पहुँचे। बाकी योद्धाओं को उसने दूरी पर ही खड़े रहने को कहा और स्वयं भानुदत्त जाकर फाटक खटखटाने लगा।

"कौन हो!" फाटक के उस तरफ से आवाज़ आई।

"मैं भानुदत्त हूँ।" भानुदत्त ने कहा।

तुरत फाटक का छोटा द्वार खोला गया। द्वार-रक्षक ने बाहर आकर पूछा—"तो आप हैं! आप अकेले क्यों आये! कोई खतरा तो नहीं है।"

"थोड़ा काम है। सवेरे होते ही वापिस चला जाऊँगा"—भानुदत्त ने कहा।

"तो आइये।" द्वार-रक्षक ने भानुदत्त को अन्दर आने दिया और द्वार के किवाड़ बन्द कर दिये। तुरत भानुदत्त द्वार-रक्षक पर

कूदा, और उसका गला घोंट दिया। फिर उसके मुख में कपड़े ठूँस दिये, उसके हाथ पैर बांध कर, पास के पेड़-पौधों के पीछे घसीट दिया। तब उसने साथ आये हुए योद्धाओं के आने के लिए द्वार खोल दिये। उन सब को ले जाकर उसने एक मन्दिर के आँगन में छुपा दिया। "मेरा काम जबतक पूरा न हो जाए तब तक तुम यहीं रहना। मैं जल्दी ही वापिस आ जाऊँगा।" यह कह भानुदत्त चल पड़ा। वह सीधे नन्दिकेतु के घर जाकर उसके सोने के कमरे में पहुँचा। नन्दिकेतु गाढ़ी नींद सो रहा था। "दुश्मन आ गये हैं।" कहकर भानुदत्त ने उसे थपथपाकर उठाया।

नन्दिकेतु हड़बड़ाता उठा। जब उसने सामने भानुदत्त को देखा तो उसका दिल ज़ोर से धड़कने लगा। उसके मुख से बात तक न निकली।

"तुम तो वीर हो, महावीर हो। आफ़त आ रही है और तुम यों आँखें बड़ी करके देख रहे हो!"—भानुदत्त ने कहा।

"मुझे तल्वार लेने दो। बेहथियार को न मारो।"—नन्दिकेतु ने कहा।

भानुदत्त ने कहा—"मैं तुम्हारी तरह नीच नहीं हूँ। तुम्हें मुझसे कोई खतरा नहीं है! मन्दिर में साठ हथियारबन्द योद्धा हैं। उन्हें मन्दिर से बाहर न आने देने के लिए दीवारों पर सौ सैनिकों को चढ़वाओ। सब तरफ़ सैनिकों को देखकर वे अपने हथियार छोड़ देंगे। सवेरा होने पर पुलिन्द की सेनाएँ फाटक पर आ जाएँगी। क़िले की दीवारों पर अपनी सेना को सिद्ध रखो। यह बताने के लिए ही मैं आया हूँ।"

जाने कहाँ से नन्दिकेतु में शक्ति आ गई। उसने भानुदत्त के साथ सौ तीरन्दाज़ों को मन्दिर के पास भेजा। जब सब धनुष लेकर दीवारों पर चढ़ गये तो भानुदत्त ने अन्दर आकर साठ योद्धाओं को बुलाया। उनके बाहर आते ही सौ तीरन्दाज़ों ने चिल्लाकर कहा—"हथियार नीचे रख दो।" भानुदत्त के योद्धा घबरा गये। उन्होंने अपनी तलवारें फेंक दीं। तुरन्त तीरन्दाज़ों ने दीवारों से कूद कर उनके हाथ-पैर बाँध दिये।

भानुदत्त, वहाँ से नन्दिकेतु और उसकी सेना को लेकर, दक्षिण द्वार पर पहुँचा। वहाँ पेड़ों की झुरमुट में पड़े द्वार-रक्षक को छुड़वाया। फिर सैनिक क़िले की दीवारों पर चढ़ गये।

सवेरे पुलिन्द की सेनाएँ पहुँचीं। उनके लिए द्वार खुलने तो अलग, उनका बाणों ने स्वागत किया। देखते देखते पुलिन्द के कई सैनिक मारे गये। बाकी, इधर उधर भाग गये। नन्दिकेतु ने अपने सैनिकों के साथ उनका काफ़ी दूर तक पीछा किया।

थोड़ी देर बाद, नन्दिकेतु और भानुदत्त दरबार में पहुँचे। नन्दिकेतु ने दरबार में, सारी घटना सुनाकर कहा—"महाशय! हमने पहिले भानुदत्त को देश निकाला दिया था। मेरी प्रार्थना है कि उसकी सज़ा रद्द कर दी जाय और उसको उप सेनाधिपति के पद पर नियुक्त किया जाय!" भानुदत्त सिर्फ़ उप सेनाधिपति ही न बना, बल्कि नन्दिकेतु का दामाद भी बन गया।"

वेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा! भानुदत्त ने जब एक बार अपने प्रेम के लिए बदला लेना छोड़ दिया था, क्यों फिर बदला लेने का निश्चय किया था? फिर जब उसे मौका मिला तो बदला लेने की कोशिश दुबारा क्यों छोड़ दी थी? अगर जान बूझकर तुमने इन प्रश्नों का जवाब न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

"प्रेम से बढ़कर प्रतीकार है। इसीलिए भानुदत्त में यद्यपि प्रेम ठंडा हो गया था, पर बदले की भावना बनी रही थी, इसीलिये वह पुलिन्द की सहायता लेकर बदला लेने निकला। परन्तु प्रतीकार से भी बढ़कर देशभक्ति है। जब उसको मालूम हुआ कि नन्दिकेतु से बदला लेने पर देश शत्रुओं के कब्जे में हो जायेगा, उसने अपना बदला लेना छोड़ दिया। और कोई बात नहीं है।"—विक्रमार्क ने जवाब दिया।

इस तरह राजा का मौन भंग होते ही, वेताल शव के साथ फिर पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

ग्रह-बल

किसी ज़माने में, विन्ध्यदेश में सुरेश नाम का एक राजा रहा करता था। एक दिन, जब वह वेश बदल कर मन्त्री के साथ, घोड़े पर सवार होकर शहर में बाहर जा रहा था कि उसको एक झोपड़ी में, प्रसव-वेदना के कारण एक औरत का कराहना सुनाई दिया। उस झोंपड़ी के बाहर एक ब्राह्मण खड़ा प्रार्थना कर रहा था—"हे भगवान! मेरी पत्नी का जल्दी प्रसव हो।" परन्तु झोंपड़ी के अन्दर, पत्नी ने बच्चे को जन्म न दिया। थोड़ी देर बाद उस ब्राह्मण ने प्रार्थना की—"अभी मेरी पत्नी का प्रसव न करो। थोड़ी देर ठहरो।"

राजा और मन्त्री थोड़ी दूरी पर घोड़ों को रोक कर उस ब्राह्मण की अजीब प्रार्थना सुनने लगे। एक बार वह यह कहकर कि "प्रसव न हो" प्रार्थना करता, और दूसरी बार, "प्रसव हो।" इस तरह थोड़ी देर तक करने के बाद झोंपड़ी में, स्त्री का प्रसव हो गया। प्रार्थना खतम कर जब ब्राह्मण झोंपड़ी में घुसने लगा तो राजा और मन्त्री भी आगे बढ़ गये और उस ब्राह्मण से जा मिले।

"तुम कौन हो? किस देश के हो? तुमने एक बार तो यह प्रार्थना की कि पत्नी का प्रसव हो फिर कहा कि न हो, इसका क्या कारण है?" राजा ने उस ब्राह्मण से पूछा।

ब्राह्मण ने कहा—"बाबू! मैं दक्षिण देश का रहनेवाला हूँ। मैं ज्योतिष का अच्छा पंडित हूँ। इस इच्छा से कि मेरी पत्नी ठीक समय पर भाग्यशाली बच्चे को जन्म दे, मैं यों कर रहा था।"

"तो क्या तुम्हारी पत्नी ने अच्छे समय में ही जन्म दिया है?" राजा ने पूछा।

श्री नरेन्द्र मोहन सक्सेना

"जी, हाँ! बहुत ही अच्छे समय में एक लड़के को जन्म दिया है। वह जिस देश में पैदा हुआ है, उस देश की राजकुमारी से विवाह करेगा। उस देश का राज्य करेगा। और बाद में आस पास के राज्यों को जीतकर सम्राट भी बनेगा।" कहता कहता ब्राह्मण अपने झोंपड़े में चला गया।

राजा और मन्त्री एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। "क्या इस गरीब का लड़का मेरी लड़की से शादी कर इस राज्य का राजा बनेगा? मैं यह नहीं देख सकता।" —राजा ने कहा।

"महाराज! आपके तो लड़की ही नहीं है। क्यों उस पागल ब्राह्मण की बातों में पड़ते हैं?"—मन्त्री ने कहा।

"अगर उस पागल ब्राह्मण की बात सच निकली तो तब क्या किया जाय? तुम चुप चाप उस झोंपड़े में जाकर उस लड़के को ले आओ, बाकी सब मैं खुद देख लूँगा।" राजा ने कहा।

मन्त्री भी बिचारा क्या करता? वह घोड़े से उतर कर चुपचाप झोंपड़े में गया। दो स्त्रियाँ, उस स्त्री की सेवा-शुश्रूषा कर रही थीं, जिसके बच्चा पैदा हुआ था। बच्चे को गुदड़ियों में चबूतरे पर रखा हुआ था। मन्त्री उस लड़के को लेकर राजा से जा मिला। दोनों थोड़ी दूर गये। तब राजा ने अपनी तलवार उस लड़के के पेट में भोंकदी और मन्त्री से कहा—"जाओ, इसे दूर फेंक आओ।" उस बिचारे, बेकसूर लड़के को देखकर मन्त्री को बहुत दया आई। वह उस लड़के को एक पगडंडी पर रख आया। राजा और मन्त्री फिर राजमहल में चले गये।

जब वे जा रहे थे, उसी समय पासवाले मन्दिर के पुजारी, उस पगडंडी से नदी

में स्नान करने आ रहे थे। उनको रास्ते में कोई कपड़े की पोटली-सी दिखाई दी। आकर जो उन्होंने देखा तो वह एक लड़का था। अर्चक उस लड़के को लेकर तुरन्त घर वापिस चला गया। उसके पेट में तलवार का घाव था। पर वह जिन्दा था। अर्चक, जड़ी-बूटी की चिकित्सा में बड़ा कुशल था। वह कहीं से कुछ पत्ते बटोर लाया और उनका रस घाव पर लगाकर उसने पट्टी बाँध दी।

थोड़े दिनों में उस लड़के का घाव भर आया। अर्चक के अपने बाल-बच्चे न थे। वह उस बच्चे का पालन-पोषण करने लगा। उसका नाम उसने देवदत्त रखा और उसको पुत्र की तरह देखने लगा।

एक साल भी पूरा न हुआ था कि राजा की पत्नी को गर्भ हुआ और यथा समय उसके एक लड़की पैदा हुई। उस लड़की का नाम चन्द्रावती रखा गया। यह सोच कि अगर वह उस दिन उस ब्राह्मण लड़के की हत्या न कर देता तो कभी वह उसकी लड़की का पति होता, राजा बड़ा प्रसन्न हुआ।

पर जिस बालक को राजा मरा समझ रहा था वह मन्दिर के आँगन में खेलता-कूदता, मज़ा करता, रोज़ बड़ा हो रहा था। उसकी शक्ल-सूरत, हाव-भाव देखकर, सब उसको पसन्द करते थे।

पन्द्रह वर्ष बीत गये। मन्दिर की भूमि के बारे में कुछ अन्याय हो रहा था। अर्चक एक दिन इसकी शिकायत करने राजमहल के लिए निकला। देवदत्त कभी मन्दिर की चारदीवारी से बाहर न गया था। इसलिए वह भी राजमहल देखने के लिए अर्चक के साथ चल पड़ा।

जब वे राजमहल में पहुँचे तब राजा राज महल के बगीचे में टहल रहा था। अर्चक,

देवदत्त को एक पत्थर पर बिठाकर, राजा के पास मन्दिर की भूमि के बारे में बातचीत करने गया। राजा ने वचन दिया कि वह अन्याय दूर कर देगा। तब दोनों मिलकर, उस जगह पहुँचे, जहाँ देवदत्त बैठा हुआ था। उनको देखकर देवदत्त खड़ा हो गया।

"यह लड़का कौन है! बहुत खूबसूरत मालूम होता है।"—राजा ने पूछा।

"यह मेरा लड़का है....हाँ, दत्तक लड़का है।"—अर्चक ने कहा।

उस लड़के का वृत्तान्त अर्चक द्वारा सुनकर राजा बड़ा घबड़ाया। वह वही लड़का था, जिसको उस दिन उसने मारने की कोशिश की थी। उसके पेट पर अब भी तलवार की चोट का निशान था। राजा ने सोचा कि उसका जीवित रहना न उसके लिए अच्छा था न उसकी लड़की के लिए ही। उसने अर्चक से कहा—"इस लड़के को उस मन्दिर में रखकर क्यों बिगाड़ते हो? यहीं महल में रखो। दुनियाँ का अनुभव होगा।"

"आपकी दया। ज़रूर उसको आप अपने पास रखिये।"—अर्चक ने कहा।
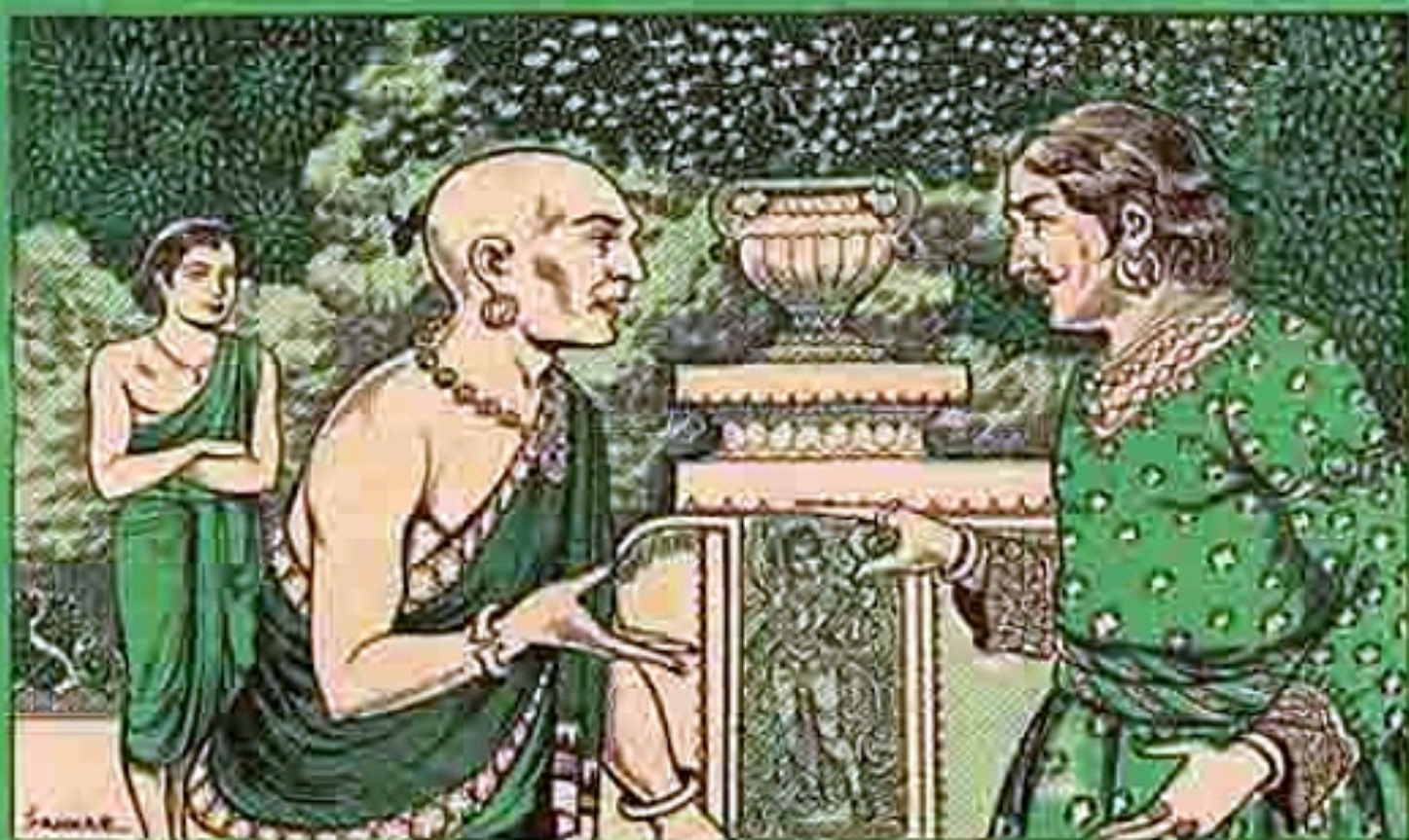
वह राजा से आज्ञा लेकर अकेला ही मन्दिर वापिस चला गया।

जानी दुश्मन देवदत्त का कैसे काम तमाम किया जाय, राजा को न सूझा। उसको मारने की पहिली कोशिश के बारे में सिर्फ़ मन्त्री ही जानता था। वह कोशिश नकामयाब रही। अब वह फिर उसके हाथ में आ गया था। बिना किसी के जाने, उसको उसे तुरन्त मार देना था। राजा के लिए उसको मारना एक समस्या हो गयी थी। वह हमेशा इस विषय में ही माथापची करता रहता।

ठीक इसी समय राजा को दूर देश जाना पड़ा। जाते वक्त राजा देवदत्त को भी साथ ले गया। पन्द्रह दिन का सफ़र था। रास्ते में, जब कभी राजा देवदत्त को पहाड़ के नीचे ढकेलने की सोचता या नदी में गिरा देने की सोचता, तो हमेशा किसी न किसी को अपने पास पाता।

राजा को आखिर एक बात सूझी। उसने अपने मन्त्री को एक पत्र लिखा। उसमें उसने लिखा—"इस चिट्ठी को लानेवाला हमारा परम शत्रु है। इसको

जैसे तैसे मरवादो और बिना किसी के जाने, इसका दहन-संस्कार भी कर दो।" चिट्ठी पर राजा ने अपनी सील लगाई और उस चिट्ठी को देवदत्त को देते हुए कहा—"तुम तुरन्त राजधानी जाकर यह चिट्ठी मन्त्री को दो। यह बहुत ज़रूरी है।"

देवदत्त चिट्ठी लेकर पन्द्रह दिन और रात लगातार घोड़े की सवारी करता रहा। वह सोलहवें दिन दोपहर को राजधानी पहुँचा। बड़ी कड़ी धूप थी। मन्त्री के लिए भोजन के बाद विश्राम का समय था। देवदत्त ने थोड़ी देर बाद जाने की ठानी। वह बगीचे में घुसकर पेड़ों की झुरमुट में आराम से सो गया।

थोड़ी देर बाद, चन्द्रावती अपने सहेलियों के साथ वहाँ खेलने कूदने आयी। वे एक दूसरे का पीछा कर पकड़ने लगीं। चन्द्रावती अपनी सहेलियों की नज़र बचाकर उस झुरमुट में घुस गयी और वहाँ देवदत्त को सोता देख वह हैरान रह गयी। वह बहुत खूबसूरत था। पर अजनबी था। पूछने की सोची। पर थका-मांदा, वह गहरी नींद में था। उसके जेब में रखी चिट्ठी उसको दिखाई दी। चन्द्रावती ने चिट्ठी निकाली। चिट्ठी पर अपने पिता की सील देखकर वह बिना किसी हिचकिचाहट के उस चिट्ठी को पढ़ने लगी।

तुरन्त राजकुमारी का कलेजा थम-सा गया। इस खूबसूरत लड़के को मारने के लिए उसके पिता ने मन्त्री को क्यों लिखा! अगर इस लड़के को मालूम होता कि इस चिट्ठी में क्या लिखा है तो वह इतनी दूर से इसे क्यों लाता! उसको जैसे जैसे देखती जाती, वैसे वैसे चन्द्रावती को उससे प्रेम होने लगा। उसे दया भी आने लगी।

जब राजकुमारी दिखाई न दी, तो उसकी सहेलियाँ उसे पुकारने लगीं। चन्द्रावती झुरमुट से बाहर आ गयी। सहेलियो से मिली। उनमें से एक को बगीचे के द्वार पर पहरा देने के लिए कह, और दूसरी को, कई शपथें करवाकर, वह चिट्ठी दिखायी। काफी देर तक सलाह-मशवरा होता रहा। आखिर यह तय हुआ कि उस चिट्ठी को फाड़ दिया जाय और उसकी जगह दूसरी चिट्ठी लिख कर उसकी जेब में रख दिया जाय।

फिर चन्द्रावती ने अपने कमरे में आकर यह चिट्ठी लिखी—"इस चिट्ठी को लाने वाला हमारा परम मित्र है। इसका मेरी लड़की, सौभाग्यवती चन्द्रावती के साथ विवाह कर दिया जाय। मेरे आने तक विवाह को रोकने की कोई जरूरत नहीं है।" चिट्ठी पर सील लगाकर तुरन्त जाकर सोते हुए देवदत्त की जेब में रख दिया।

फिर चन्द्रावती और उसकी सहेलियाँ अट्टहास करके हँसीं। उन्होंने शोर किया। शोर के कारण देवदत्त नींद से उठा। वह घबराता हुआ खड़ा हुआ। कहीं ऐसा न हो कि देरी हो जाये। वह चिट्ठी लेकर तुरन्त मन्त्री के पास गया।

चिट्ठी पढ़कर मन्त्री को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने पूछा—"क्यों भाई! राजा ने तुमसे क्या कहा था?"

"इस चिट्ठी को आपको देने के लिए कहा था।"—देवदत्त ने कहा।

"क्या तुम जानते हो इसमें क्या लिखा है?"—मन्त्री ने पूछा। देवदत्त ने कहा—"मुझे मालूम नहीं है।"

"अच्छा तो तुम जाकर राजमहल में ठहरो। मैं फिर तुम्हारे लिए ख़बर भेजूंगा।"

यह कह मन्त्री राजकुमारी के पास गया, और उसी को उसकी जाली चिट्ठी दिखाई।

चन्द्रावती ने पूछा, जैसे उसे कुछ मालूम ही न हो—"यह क्या है? पिताजी की ग़ैरहाज़िरी में किसी से कैसे शादी करूँ? यह कैसे हो सकता है?"

"मैं भी क्या कर सकता हूँ? राजा की आज्ञा है। उसका उलंघन करना मेरे अधिकार में नहीं है।"—मन्त्री ने कहा।

"जो आपकी मर्ज़ी हो वही कीजिये। मुझ से पूछने की क्या ज़रूरत?"—चन्द्रावती ने कहा।

मन्त्री ने ज़ोर-शोर से विवाह की तैयारियाँ शुरू कर दीं। और दो-चार दिनों में बड़े धूमधाम से चन्द्रावती का विवाह देवदत्त से कर दिया। उस विवाह में उपहार पाने के लिये, दूर दूर से ब्राह्मण आये।

इस बीच में राजा वापसी यात्रा पर निकला। विवाह से वापिस जाते हुए ब्राह्मणों ने उसको शादी के बारे में बढ़ा-चढ़ा कर कहा। राजा को यह सुन आश्चर्य हुआ। उसकी अनुपस्थिति में उसकी लड़की का किसने विवाह किया? क्यों किया? वह इसी उधेड़बुन में पड़ा अपनी राजधानी में पहुँचा। वहाँ उसको सारी घटना मालूम हुई।

"मेरी लिखी चिट्ठी कहाँ है?" राजा ने पूछा। मन्त्री ने चिट्ठी दिखा दी। राजा जान गया कि उसकी लड़की ने ही यह चाल चली थी। पर उसने कुछ न कहा।

"महाप्रभु! आपको जो, विवाह स्वयं करवाना चाहिये था, आपने मुझ से क्यों करवाया?" मन्त्री ने पूछा।

"अरे पागल! यह सब ग्रहों का बल है।"—राजा ने कहा।

मित्र-भेद

बैठ गया जब दमनक आकर
झुका पिंगलक को निज माथ,
कहा पिंगलक ने तब उसके
माथे पर धर अपना हाथ—

"दमनक, कहो, कुशल से तो हो?
आये बहुत दिनों के बाद,
पड़ी ज़रूरत क्या है तुमको
आयी जिससे मेरी याद?"

दमनक बोला—"स्वामी मेरे,
नहीं बात कोई है खास,
हित के वचन सुनाने यों ही
आया है सेवा में दास।

उत्तम, मध्यम, अधम दास हैं
रखते यद्यपि राजा लोग
अपनी अपनी जगह सभों का
होता ही रहता उपयोग।

उपालंभ यह दिया आपने
आया बहुत दिनों के बाद,
कहता उसका भी कारण मैं
समक्ष उसे ही लूँ फ़रियाद।

कितनी पीढ़ी-दर-पीढ़ी से
सेवक हम चरणों के नाथ,
पीछे पीछे फिरते हमने
दिया दुःख में भी है साथ।

किंतु नहीं मिलता है हमको
उचित हमारा जो अधिकार,
उचित नहीं होगा स्वामी यह
करें न यदि अब आप विचार।

नहीं आप समझें मुझको अब
केवल दुर्बल तुच्छ सियार,
समय पड़े तो लघु तिनका भी
बनता प्राणों का आधार।

मिट्टी पर ही उग आती है
हरी-भरी मखमल-सी दूब,
और कीच में ही मनमोदक
लाल कमल खिलते हैं खूब।

'भारतीभक्त'

कीड़ों से है रेशम बनता
देते हैं सोना पाषाण
शुष्क काष्ठ में ही रहते हैं
छिपे अग्नि के दाहक प्राण।

अपने गुण के बल चढ़ जाते
उन्नति-गिरि पर हैं गुणवान,
नहीं पूछता कोई उनसे
कहाँ तुम्हारा जन्मस्थान?

खुश हो कर देता है राजा
सेवक को केवल सम्मान,
लेकिन सेवक कर देता है
उसके हित अपना बलिदान!"

यों दमनक की बातें सुनकर
पिंगलक बोला बहुत मुदित—
"कहो, तुम्हें जो भी कहना है
भय से हो कर यहाँ रहित।"

दमनक बोला—"अभी कहूँगा
किंतु चाहिये कुछ एकांत,
ताकि कहूँ मैं शंका तजकर
और आप भी सुन लें शान्त!

क्योंकि चार कानों तक रहती
छिपी भेद की कोई बात,
छः कानों में जाते ही, बस,
मच जाता भीषण उत्पात!"

सुनते ही यह तुरत उठ गये
सभी सभासद योद्धा शूर,
और पिंगलक को प्रणाम कर
चले गये झटपट ही दूर।

हुआ अभी एकान्त सभा में
दमनक ने छेड़ी यह बात—
"बिना पिये जल वापस आये
स्वामी, कहें, हुई क्या बात?"

पिंगलक बोला लज्जित स्वर में—
"नहीं हुई कुछ भी है बात!"
दमनक बोला—"ठीक, कहें मत,
अगर न कहने लायक बात।

क्योंकि कई बातें होती हैं
जिन्हें छिपाते सभी सुजान,
मित्र, पुत्र क्या पत्नी तक भी
कभी न पाती उनको जान।"

सोचा पिंगलक ने यह मन में
दमनक तो लगता गुणवान,
क्यों न इसे ही कह दूं सब कुछ
है अब यह जाति चतुर सुजान।

फिर वह बोला—"सुनते हो क्या
दमनक यह भीषण आवाज़
दूर कहीं से आती है जो
रह रह कर गर्जन की आज?"

"हाँ, सुनता हूँ, पर उससे क्या?"
दमनक की सुनकर यह बात,
पिंगलक बोला "सोच रहा इस
वन को तज जाने की बात।"

दमनक ने पूछा—"आखिर क्यों?"
पिंगलक तब बोला उदास—
"इस वन में आया है करने
बलशाली अब एक निवास,

होगा बहुत भयंकर ही वह
जैसी है उसकी आवाज़।
आह, पराजय से अच्छा है
वन ही तज जाऊँ मैं आज

दमनक झट बोला तब—"स्वामी
व्यर्थ आप क्यों होते भीत?
नहीं युक्तिसंगत है होना
शब्द मात्र सुनकर भयभीत।

कितने ही बाजे होते हैं
करते जो ऊँची आवाज़,
डरता उनसे कौन भला है,
कौन छोड़ देता है राज?

युद्धक्षेत्र में बहुत ज़ोर से
बजता जो रहता है ढोल,
पता लगा अन्दर जाने पर
'गोमायु' को उसकी पोल!"

"मेरा पिता बहुत बड़ा व्यापारी था। गरीबों को वह हमेशा दान दिया करता। उनकी बड़ी मदद करता। जब वे मरे तो उनके पास, बेशुमार धन-दौलत, ज़मीन-जायदाद, गाँव वगैरह थे। सयाना होने पर मैं ही इस विशाल सम्पत्ति का मालिक बना।

मैंने अपने हम उम्र के दोस्तों के साथ ऐश उड़ाने शुरू कर दिये। जी भरके हम पीते। पैसा पानी की तरह खर्चते। मेरा यह ख्याल था कि मैं कितना भी खर्च क्यों न करूँ किसी भी हालत में मेरी सम्पत्ति कम न होगी। पर थोड़े दिनों बाद ही मेरी आँखें खुलीं। क्योंकि मेरी सारी सम्पत्ति क़रीब क़रीब खतम हो गयी थी। मुझे डर लगा कि कहीं ऐसा न हो कि बुढ़ापे में गरीबी देखनी पड़े। दर दर भटकना पड़े। मेरे पिता हमेशा कहा करते थे—"मरे शेर से अच्छा जीता कुत्ता है। गरीबी से मौत ही भली।" उनकी ये बातें मुझे याद हो आयीं।

प्रथम समुद्र-यात्रा

CHITRA

इसलिए जो कुछ मेरे पास बाकी रह गया था उसको बेच-बाचकर तीन हज़ार चान्दी की दीनारें नक़द बना लीं। इस धन को लेकर मेरा घूमने-फिरने का ख़्याल था। यह तो कहावत है ही कि जितने गहरे जाओ, उतने ही अच्छे मोती मिलते हैं। उस पैसे से तरह तरह की चीज़ें खरीदकर, बग़दाद से मैं भी एक नाव में निकला। उसी नौका में और भी कई व्यापारी थे। नौका बसरा की ओर जा रही थी।

बसरा से हमने समुद्र में यात्रा शुरू की। रास्ते में कितने ही द्वीप दिखाई दिये। कितने ही बन्दरगाह आये। हर जगह मैं अपना माल बेचता और दूसरा माल खरीदता। यही सिलसिला जारी रहा।

कई दिनों तक हमें भूमि भी न दिखाई दी। फिर हम एक सुन्दर द्वीप में पहुँचे। वह बहुत ही हरा भरा था। मरकत मणि की तरह आकर्षित कर रहा था। नौका ने द्वीप के पास लंगर डाला। रस्सियों की सीढ़ी द्वारा दूसरे यात्रियों के साथ मैं भी ज़मीन पर उतर गया।

सभी व्यापारियों के पास खाने की चीज़ें, और पकाने के लिए बर्तन वग़ैरह थे।

कई ने आग जलाकर रसोई बनानी शुरू कर दी। कई अपने कपड़े धोने लगे। कुछ इधर उधर मटरगश्ती करने लगे, कुछ आराम करने लगे। मैंने, न केवल खाने-पीने का ही प्रबन्ध किया, अपितु वहाँ अजीब पेड़ों के बीच घूम-फिर कर सब कुछ देख भी लिया।

हम अपने अपने काम में मशगूल थे कि वह द्वीप, एक सिरे से दूसरे सिरे तक यकायक काँप गया। जो जहाँ खड़ा था, वहीं गिर पड़ा। जब हम होश-हवास खोये हुए ज़मीन पर गिरे हुए थे,

तब नौका का कप्तान, नौका से हाथ उठाकर ज़ोर ज़ोर से पागल की तरह चिल्ला रहा था—"ख़तरा है, अपनी जान बचाओ। यह द्वीप नहीं है। यह बहुत बड़ा तिमिंगल मच्छ है। क्योंकि सालों से यह समुद्र में पड़ा है इसलिये उसकी पीठ पर रेत जमा हो गई है और रेत में पेड़-पौधे उग आये हैं। आपने आग जलाकर उसे जिला दिया और वह अब हिल रहा है। जल्दी कीजिए। आप आ जाइये। नहीं तो वह पानी में डूबेगा, और साथ आप लोग भी डूबेंगे।"

यह सुन व्यापारी अपना सामान, बर्तन वगैरह छोड़ कर, नौका की ओर दौड़े। नौका का लंगर उठा दिया गया। नौका चल पड़ी। कई नौका को पकड़ पाये और कई नहीं। और इस बीच में तिमिंगल पानी में डूब भी गया। जो उसकी पीठ पर रह गये थे, वे समुद्र में छोड़ दिये गये।

उन लोगों में मैं भी एक था। परन्तु खुदा की मेहरबानी से एक लकड़ी का कठौता मेरी तरफ़ बहता आया। व्यापारियों ने उसमें कपड़े धो रखे थे। उसने मुझे समुद्र में डूबने से बचा दिया। जान पर

मोह था, इसलिए मैंने उसको पकड़ लिया, और बड़ी मुश्किल से उसमें चढ़ बैठा। जब अच्छी तरह बैठ गया, तो पैरों को चप्पू की तरह चला चला कर, आगे बढ़ता गया। परन्तु लहरों के ज़ोर से वह कठौता कभी इधर झुकता तो कभी उधर। मेरी हालत बड़ी नाज़ुक थी।

इस बीच में, नौका के पाल ऊँचे कर दिये गये और वह वायु वेग से बहने लगी। मैं भी पैरों को ज़ोर से चप्पू की तरह चलाता नौका की ओर जी-जान से जाने लगा। परन्तु वह थोड़ी देर में ही, नज़र से बाहर हो गयी। अन्धेरा भी हो गया। मैंने सोचा कि मैं मर ही जाऊँगा। रात भी, समुद्र से लोहा लेता रहा। आख़िर मुझे हवा, और लहरों ने एक द्वीप पर लाकर पटक दिया। द्वीप के किनारे बड़े बड़े पहाड़ थे। परन्तु पहाड़ों से कई बेलें समुद्र पर लटक रही थीं। मैं अपनी सारी ताकत लगाकर उन बेलों के सहारे पहाड़ की चोटी पर चढ़ गया। मैंने अपनी जान बचा ली।

चोटी पर पहुँच कर, मुझे अपनी दुस्थिति का भान हुआ। मेरे सारे शरीर

पर घाव और छाले पड़ गये थे। समुद्र की मछलियों ने मेरे पैरों को खा लिया था। मुसीबत में था, इसलिये मेरा ध्यान इन घावों की तरफ़ गया ही न था; परन्तु अब दर्द होने लगा। दर्द के कारण बेहोश हो गिर गया।

दिन भर मैं बेहोश पड़ा रहा। जब अगले दिन मेरे मुँह पर धूप पड़ी तो मैं उठा। मैंने खड़े होने की कोशिश की, पर पैर जवाब दे चुके थे। मैं नीचे गिर पड़ा। मेरी स्थिति क्या थी, क्या बताऊँ! जैसे तैसे, रेंगता रेंगता मैं एक समतल

जगह पर पहुँचा। वहाँ फलों के पेड़ थे। पानी भी था।

उन्हें खा-पीकर मैं वहाँ बहुत दिनों तक आराम करता रहा। कुछ ताकत भी आ गई। मेरे घाव भी धीरे धीरे भर गये। इधर उधर घूमने के लिये मैंने एक-दो डंडे भी बना लिये। उनके सहारे मैं फल तोड़ता, खाता-पीता, अल्ला को दुआ देता, मजे में रहने लगा। मुझे किसी तरह की चिन्ता न थी।

जब मैं एक दिन किनारे पर टहल रहा था तो मुझे दूरी पर कोई जानवर-सा कुछ दिखाई दिया। मैं उसके पास गया। वह एक बंधा हुआ घोड़ा था। वह कोई मामूली घोड़ा नहीं था। अच्छी नसल का जान पड़ता था। पास जाकर उस पर चढ़ने की मेरी मर्ज़ी हुई। अभी मैं घोड़े से काफ़ी दूर ही था कि किसी व्यक्ति ने मेरी तरफ़ आते हुए पूछा—"तुम कौन हो? कहाँ से आ रहे हो? यहाँ आने की तुमने कैसे हिम्मत की? कोई और भी है तुम्हारे साथ?"

"बाबू! मैं समुद्र-यात्रा कर रहा था। मैं और मेरे कुछ साथी समुद्र में गिर गये।
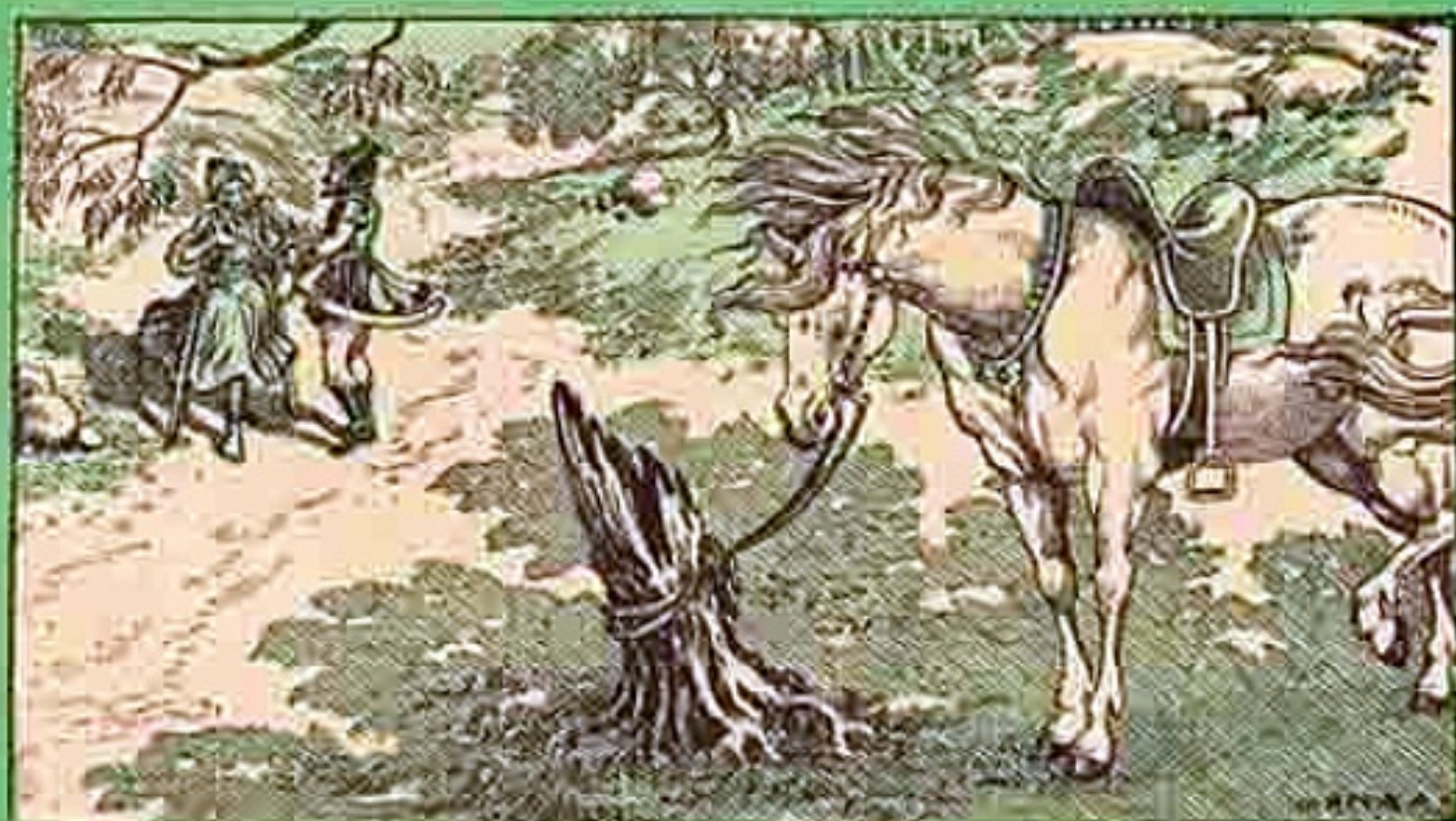
खुदा ने मेरी जान बचाई और मुझे आपके द्वीप में लाकर रख दिया।"—मैंने बड़े विनीत भाव से कहा।

"मेरे साथ आओ।" कहते हुए, वह व्यक्ति मेरा हाथ पकड़कर मुझे एक गुफ़ा की ओर ले गया। अन्दर एक बड़ी चोपाल-सी थी। उसने मुझे एक अच्छी जगह बिठाकर खाना परोसा। पेट भरने के बाद उसने मेरी कहानी पूछी। मैंने अपनी कहानी उसे सुना दी। मेरी कहानी सुनकर, उसे बहुत आश्चर्य हुआ। "मैंने अपनी कहानी सुना दी। अब आप भी अपने बारे में सुनाइये।"—मैंने उस व्यक्ति से पूछा।

"इस द्वीप में, मुझ जैसे कई आदमी हैं। हमारा काम मीरजान महाराजा के लिए घोड़े लाकर देना है। प्रति अमावस्या के दिन समुद्र में से अच्छे अच्छे घोड़े किनारे पर चरने आते हैं। उन्हें पकड़ना ही हमारा काम है। मैं तुम्हें मीरजान महाराजा के पास ले जाऊँगा। अच्छा हुआ कि हम एक दूसरे से मिल सके नहीं तो तुम इस द्वीप में यूँ ही मर मरा जाते।"—उस व्यक्ति ने कहा।

इस बीच में और नौकर भी वहाँ पहुँचे। मुझे एक घोड़े पर चढ़ाया। सब मिलकर मीरजान महाराजा के महल में गये। नौकरों ने जाकर राजा से मेरे बारे में पहिले कहा। बाद में मैं उनसे मिलने गया। उन्होंने मेरा आदर-सत्कार किया। मैंने अपनी कहानी फिर सुनायी। उन्होंने कहा—"तुम्हारी आयु लम्बी मालूम होती है। नहीं तो इतनी मुसीबतें झेलने के बाद तुम ज़िन्दा न रहते।" उन्होंने मुझे अपना विश्वासपात्र बना लिया और मुझे बन्दरगाह और नौकाओं की देख-रेख करने के लिए अच्छे पद पर नियुक्त किया।

नौकरी में मुझे काफ़ी फ़ुरसत मिलती थी। इसलिए मैं राजा से रोज़ मिला करता। रोज़ उनका विश्वास मेरे ऊपर बढ़ता गया। वे हर रोज़ कोई न कोई इनाम मुझे देते। आख़िर ऐसा समय भी आया जब वे बिना मेरी सलाह के कोई भी राज का कार्य न करते।

यद्यपि मेरे दिन मज़े में कट रहे थे, फिर भी मुझे अपने देश की याद नित सताती रहती। मैं उम्मीद बांधे बैठा था कि कभी न कभी मैं अपने देश वापिस जा सकूँगा। मैंने कई नाविकों से पूछा—"बग़दाद शहर किस ओर है?" परन्तु किसी ने भी कुछ न बताया। उनको उस शहर का नाम भी न मालूम था। इसलिए जैसे जैसे दिन गुज़रते गये, वैसे वैसे मेरी स्वदेश जाने की इच्छा भी प्रबल होती गई। पर साथ यह भय भी बढ़ता गया कि शायद वापिस न जा पाऊँ।

एक दिन, जब मैं बन्दरगाह में खड़ा, नावों को देख रहा था तो बन्दरगाह में एक बड़ी नौका आयी। उसके लंगर डालते ही,

सीढ़ी नीचे की गयी। मैं जाकर जहाज के कप्तान से मिला। मैंने नौका के माल की जाँच-पड़ताल की। जब नाविक उसको बाहर निकाल रहे थे तो मैंने उसकी फेहरिस्त भी तैयार कर ली। जब सारा माल उतार दिया गया तो मैंने कप्तान से पूछा—"क्या नाव में और कुछ नहीं है?" उसने कहा—"है तो। पर वह बेचने के लिए नहीं है। इसलिए तले में रख रखा है। उस माल का व्यापारी समुद्र में डूब गया है। मौका मिलने पर मैं वह माल उसके रिश्तेदारों को सौंप दूँगा। वे बग़दाद में रहते हैं।"

मेरा दिल तेज़ी से चलने लगा। "उस आदमी का नाम क्या है?"—मैंने उत्कण्ठापूर्वक कप्तान से पूछा। "नाविक सिन्दबाद।"—उसने जवाब दिया। मैंने उस आदमी को ग़ौर से देखा। वह वही था, जो हमें समुद्र में छोड़कर नाव ले गया था।

"मैं ही नाविक सिन्दबाद हूँ।"—मैं ज़ोर से चिल्लाया। मैंने उसको अपना किस्सा जैसे जैसे गुज़रा था, वैसे वैसे सुना दिया। परन्तु कप्तान को मेरी बातों पर यक़ीन न हुआ। "कितना अन्याय! कितना धोखा! हम सब ने सिन्दबाद को समुद्र में डूबते देखा और तुम कहते हो कि तुम ही सिन्दबाद हो। झूट बोलते हुए तुम्हें शर्म नहीं आती?"

"झूट बोलने की मुझे क्या पड़ी! मैं यह साबित कर दूँगा कि मैं ही सिन्दबाद हूँ। देख लेना।" मैंने उसको यह बताया कि कैसे हम ने तिमिंगल मच्छ को एक द्वीप समझ लिया था, कैसे हम उस पर उतरे थे। आखिर कप्तान को मुझ पर विश्वास करना पड़ा। उसने नौका में यात्रा करनेवाले और

व्यापारियों को बुलाकर उनसे मेरा परिचय कराया। उन सब ने खुदा को दुआ दी।

कप्तान ने मेरा माल मुझे सौंप दिया। मैंने माल में लगी सील को देखा। कुछ बहुमूल्य चीज़ें मीरजान महाराजा को भेंट देने के लिए छोड़, मैंने बाक़ी सामान बज़ार में ले जाकर बिकवा दिया। इस बिक्री से मुझे एक रुपये पर सौ रुपये की आमदनी हुई।

राजा यह सुन बड़ा सन्तुष्ट हुआ। वह मुझे बहुत चाहता था। मेरे उपहारों के बदले उन्होंने कई गुने अधिक उपहार मुझे दिये। मैंने उनको भी तुरन्त बिकवा दिया। नक़द पैसा ले जाकर नौका में रखवा दिया। यात्रा की तैयारी कर मैं आख़िरी बार राजा को देखने गया। मैंने उनको धन्यवाद दिया—उनके सामने अपनी कृतज्ञता व्यक्त की। मुझे जाते देख उन्हें बड़ा अफ़सोस हुआ। उन्होंने इस बार मुझे तरह तरह के इत्र, चन्दन, कपूर, अगरबत्ती आदि, भेंट में दिये। ये चीज़ें उस द्वीप में बहुतायत में पायी जाती थीं। उन सब को नौका में चढ़ाकर मैं अपनी जन्म-भूमि की तरफ़ निकल पड़ा।

खुदा की मेहरबानी से, नाव को अनुकूल हवा मिली। बहुत दिन सफ़र करने के बाद, बसरा होते हुए हम जन्म-भूमि बग़दाद पहुँचे। खुश किस्मती से मेरे दोस्त सब स्वस्थ और कुशल थे। मैंने अपने धन से कई मकानात, गुलाम, बाग़-बगीचे, ज़मीन-जायदाद वग़ैरह खरीदे। जो मेरे पिता मुझे दे गये थे, उससे कहीं अधिक मेरी सम्पत्ति हो गई थी। मैं मज़े में रहने लगा और पहली समुद्र यात्रा के कष्टों को धीमे धीमे भूल गया और इस तरह पहिली समुद्र-यात्रा का अन्त हुआ।

(अभी और है)

बन्दरों का काम

एक राजा के बाग़ में बन्दरों का एक झुण्ड रहा करता था। उस झुण्ड का एक बड़ा बन्दर सरदार था। एक दिन शहर में मेला लगा। बाग़ के माली ने बन्दरों के सरदार को बुलाकर कहा—"मैं मेला देखने जा रहा हूँ। आज ज़रा अपने बन्दरों से पेड़-पौधों को पानी दिलवाना।" बन्दरों का सरदार यह करने के लिये मान गया।

बंदर, लोटे लेकर ज़ोर-शोर से पौधों को पानी देने लगे। उनका उत्साह देखकर उनके सरदार ने कहा—"तुम फ़ालतू पानी ख़राब कर रहे हो। जिस पौधे को जितना पानी चाहिये उतना ही दो।"

"पर पानी मापा कैसे जाय!"

"हर पौधे को उखाड़ कर देखो कि उसकी जड़ कितनी लम्बी है। लम्बी जड़ों वाले पौधों को अधिक पानी दो, और छोटी जड़वालों को कम।"

बन्दरों ने यही किया। जब मेले से माली लौटकर आया तो सारा बाग़ उजड़ा हुआ था। बन्दरों का काम देखकर उसे बड़ा दुःख हुआ।

वायुमण्डल—वातावरण

यह पहिले बताया जा चुका है कि वायुमण्डल के तीन स्तर हैं और वातावरण सम्बन्धी परिवर्तन सबसे निचले स्तर में ही होते हैं। उस स्तर में वायु का परिमाण सर्वत्र समान नहीं होता। वायु में भी गढ़े, पहाड़, मैदान, आदि हैं, जो हमें दिखाई नहीं देते। इनका अध्ययन करना विशेषज्ञों का काम है।

इनमें कई का तो क़रीब क़रीब स्थिर रूप है। जैसे, उत्तर ध्रुव में ठण्डी हवा का होना। यह हवा भारी होती है और इस तरह फैली हुई होती है, मानों किसी कटोरे को उलट दिया गया हो। भूमध्य रेखा के पास वायु की एक "घाटी" सी है। यहीं से वाष्प भरी हल्की हवा ऊपर उठती रहती है।

मकर और कर्कट रेखा के पास ठण्डी हवा के मानों "पहाड़" से हैं। परन्तु ये भूमि पर सब जगह नहीं हैं—कहीं कहीं बिखरे हुए हैं।

"वायु भँवरों" के कारण ही तूफ़ान पैदा होते हैं। भँवर की गहराई कभी कभी सौ मील होती है। 'भँवर' के बीचों बीच वायु का दबाव कम होता है। इसलिये 'भँवर' के किनारों से मध्य की ओर हवा बहने लगती है। इस तरह 'भँवर' के बीचवाली हल्की हवा ऊपर उठने लगती है। तभी वातावरण के वाष्प, वर्षा के रूप में बरसने लगते हैं।

वायुमण्डल में कई तरह की वायु हैं। सूर्य का प्रकाश भूमि पर समान रूप से नहीं पड़ता। जितनी गर्मी भूमध्य रेखा के पास होती है, उतनी ध्रुव प्रदेशों में नहीं होती और वायु सदा समानता बनाये रखने का प्रयत्न करती है। ध्रुवों से ठण्डी हवाएँ भूमध्य रेखा की ओर बहती हैं। इन्हें "व्यापारी हवाएँ" कहा जाता है।

इन हवाओं के साथ अनेक छोटी-मोटी हवायें भी बहती रहती हैं। उष्ण मण्डल के ऊपर नीचे के 'शिखरों' के दोनों ओर भी हवा चलती है। उसी तरह ध्रुवों के 'उलटे कटोरे' के चारों ओर से हवाएँ चलती हैं। इन्हीं हवाओं के कारण ही नाविक, आइसलेण्ड, ग्रीनलेण्ड, उत्तर अमेरीका देशों का पता लगा सके।

आदिम मनुष्य के औज़ार

हम पहिले ही जान चुके हैं कि साढ़े छः लाख वर्ष पहिले, आदमी ने पत्थरों से अपने औज़ार बनाना शुरू कर दिया था। वह प्रस्तर युग का आदि काल था। वह युग दस हज़ार वर्ष पहिले समाप्त हुआ। उसकी आख़िरी दशा में औज़ारों के बनाने में वृद्धि नहीं हुई। पहिले के उपकरण काटने के लिए ही काम आते थे। धीमे धीमे मनुष्य ने इनके बनाने में वृद्धि की। यही उपकरण सुधरते सुधरते कुल्हाड़ी बना। समय के साथ इस कुल्हाड़ी में भी सुधार हुआ।

फिर, गढ़े हुए पत्थरों की अपेक्षा, मनुष्य, पत्थरों की परतों का उपयोग करने लगा। यह दशा १,७०,००० वर्ष पहिले थी। उसके बाद ३७,००० वर्ष तक नियान्डर्साल मनुष्य का संसार भर में राज्य रहा। वह नोकीले पत्थरों के बाण और बरछों से शिकार किया करता।

इस भूमि पर, चार बार हिम युग आया। तब ध्रुव से भूमध्य रेखा तक बर्फ़ ही बर्फ़ थी। चौथा हिम युग का काल ७०,००० वर्ष पहिले था। तब मनुष्य दक्षिण की ओर न भागा, परन्तु तब तक वह अग्नि से अपनी रक्षा करना जान गया था।

३७,००० वर्ष पहिले से, १०,०००० वर्ष तक के समय में मनुष्य ने औज़ारों के बनाने में काफ़ी वृद्धि की। मनुष्य खाल से अपने कपड़े भी बनाने लगा। उसके बाद, तरह तरह के उपकरण तैयार हुए और उनकी सहायता से कई तेज़ हथियार, लकड़ी और हड्डी से बनाये जाने लगे। २० हज़ार या १६ हज़ार वर्ष के बीच, मनुष्य पत्थर की पतली पतली परतें निकालना सीख गया। उन परतों से कई उपकरण बनाये गये।

दस हज़ार वर्ष पहिले, प्रथम प्रस्तर युग के समाप्त होने से पहिले, मनुष्य अपने लिये आवश्यक औज़ारों को बनाना सीख गया था। कपड़े पहिनना, खाना पकाना, आदि, भी वह जान गया था। उसे खेती-बारी तो नहीं आती थी पर वह एक अच्छा शिकारी ज़रूर बन गया था।

बताओगे ?

★

१. एक ऐसा त्योहार का नाम बताओ जो इस महीने में आता है ?

२. क्या भारत कामनवेल्थ का सदस्य है ?

३. भारतीय साहित्य के प्रोत्साहन के लिए क्या सरकार ने कोई संस्था चलाई है ? उसका नाम क्या है ?

४. गंगा कहाँ से निकलती है ?

५. तिरुकुरल क्या है ?

६. एक वर्ग मील में, भारत में कितने व्यक्ति रहते हैं ?

७. भारत की कितनी प्रतिशत आबादी गाँवों में रहती है ?

८. क्या बच्चों के लिए सरकार की ओर से खास फ़िल्में बन रही हैं ?

९. टेलीफ़ोन के आविष्कर्ता का क्या नाम है ?

१०. सिक्खों का "स्वर्ण-मन्दिर" कहाँ है ?

पिछले महीने के 'बताओगे ?' के प्रश्नों के उत्तर :

१. ब्राज़ील, दक्षिण अमरीका में।

२. कोलार में।

३. एक उपाधि है, जिसे भारत सरकार उत्तम जन-सेवा करने वाले आदरणीय व्यक्ति को देती है।

४. हाँ, जहाँ जहाँ बुद्ध-धर्म प्रचलित है, वहाँ वहाँ मनाई गई, सिवाय सियाम में, जहाँ भिन्न पचांग इस विषय में प्रचलित है।

५. मनस्लु। जापान।

६. रूबल।

७. कृष्णदेवरायलु।

८. रामकृष्ण परमहंस।

९. लंका में, संख्या ९,८४,३२७ है।

१०. सिन्कोना नामक वृक्ष की छालसे।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

नवम्बर १९५८ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. १०, सितम्बर के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास-२६

सितम्बर – प्रतियोगिता – फल

सितम्बर के फ़ोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो:
'जो डाली पर सो खट्टे!'

दूसरा फ़ोटो:
'जो लूट मिले सो मिट्ठे!!'

प्रेषक: श्री आलोक अरोड़ा, C/o श्री गोपीकृष्ण अरोड़ा, पायनियर प्रेस, लखनऊ.

मोमबत्ती का जादू

मोमबत्ती का जादू भी बहुत दिलचस्प है। मोमबत्ती के चिरागदान पर एक मोमबत्ती जलती दिखाई देती है। जादूगर, एक अंगुली में दूसरी अंगुली रखकर हथेली बांध लेता है, और मोमबत्ती को दर्शक, उसकी सब अंगुलियां देख सकते हैं। परन्तु वह जलती मोमबत्ती को अपने हाथ से तैरा सकता है।

यह दर्शकों के लिए एक समस्या-सी लगेगी, सब सोचने लगेंगे कि या तो यह किसी क्लिप की मदद से किया जा रहा है, या स्प्रिंग, या चुम्बक, या रेशमी तागे से, पर यह सच नहीं है। असली बात कुछ और है। अगर आप थोड़ी देर सोचेंगे तो आपको मालूम हो जायेगा कि यह जादू कैसे किया जाता है।

जब आप एक अंगुली में दूसरी अंगुली रखते हैं, तब आप आसानी से एक अंगुली छुपा सकते हैं। कोई भी, हर अंगुली बिना गौर से गिने यह नहीं मालूम कर सकता। पर अक्सर कोई गिनता नहीं है, इस छुपी अंगुली से ही जादूगर यह जादू करता है। यह यह दिखाता है कि मनुष्य की आँख एक समय में सब कुछ नहीं देख सकती। कुछ जादूगर, इसी जादू को डंडे व रूलर से करते हैं परन्तु जलती मोमबत्ती का जादू बैठकों में अच्छी तरह किया जा सकता है।

प्रो. पी. सी. सरकार
मजीशियन
पो. बॉ. नं. ७८८८, कलकत्ता-१२

चन्दामामा आ गये!

श्री महेश चन्द्र 'सरल', हरदोई (उ. प्र.)

१

आसमान में छा गये,
हम सबको बहला गये,
दूध-मलाई खा गये,
चन्दामामा आ गये।

२

रूप-सुधा बरसा गये,
सबका मन हरषा गये,
जीवन-ज्योति जला गये,
चन्दामामा आ गये।

३

मन के फूल खिला गये,
शलिल छटा बिछा गये,
बच्चों के मन भा गये,
चन्दामामा आ गये।

४

किरन-डोर से आ गये,
आँगन में मुस्का गये,
सोये गीत जगा गये,
चन्दामामा आ गये।

५

जीवन मधुर बना गये,
अमृत-घट ढुलका गये,
हमको अमर बना गये,
चन्दामामा आ गये।

६

घर-घर को चमका गये,
प्यार-दुलार सिखा गये,
गीत सलोने गा गये,
चन्दामामा आ गये।

७

जग को सब कुछ दे गये,
साथ नहीं कुछ ले गये,
भेद-भाव ठुकरा गये,
चन्दामामा आ गये।

रंगीन चित्र-कथा

एक दिन का राजा—८

गला के किवाड़ बन्द करते ही अबू उठ खड़ा हुआ। दोनों बहुत खुश हुए। "हमारा काम अभी अधूरा ही हुआ है। अब तुम मर जाओ, मैं जाकर पैसे लाता हूँ।" अबू ने कहा।

गला भी, मक्का की ओर पैर रख, ऐंठकर लेट गयी। उस पर अबू ने दुपट्टा ओढ़ दिया और कपड़े फाड़ दुःखी-दीवाने की शक्ल बना खलीफ़ा के

पास गया। उसको देखकर खलीफ़ा, जाफ़र, मसूर आदि सब हैरान हो गये। उन्होंने उससे पूछा कि क्या बात है। अबू ज़ोर ज़ोर से रोने लगा। छाती पीटते हुए उसने कहा—"गला! गला! अब मैं कैसे जिऊँगा।"

इस प्रकार, इतनी जल्दी यकायक, एक नये परिवार को बरबाद होता देख, खलीफ़ा की आँखों में भी तरी आ गयी।

"दुःखी न हो भाई! अल्ला तुम्हें उसकी भी आयु देगा। मैंने तो यह सोचकर तुम्हारी शादी की थी कि वह तुम्हें खुश करेगी पर वह चली गई।" खलीफ़ा ने उसको आश्वासन दिया।

फिर उसने खजांची को बुलाकर हुक्म दिया कि खर्च आदि, के लिए अबू को दस हज़ार दीनारें दी जायें। अबू फिर एक बार रोया और रुपया लेकर घर चला गया।

पति-पत्नी रुपया पाकर फूले न समाते थे। अबू ने अपनी पत्नी से कहा:

"अभी त्योहार आ रहा है। अगर पोल खुल गई तो हम सब के क्रोध के शिकार होंगे। इसलिए अब हमें होशियारी से रहना चाहिए।"

खलीफ़ा ने उस दिन जल्दी ही दरबार ख़तम कर दिया। अपनी प्रिय दासी को लेकर, जुबेदा से बातचीत करने के लिए, उसके अन्तःपुर में गया। किवाड़ खुलते ही, उसको, जुबेदा और दासियाँ, दुःखी चुपचाप खड़ी दिखाई दीं।

"मैंने सब कुछ जान लिया है। मैंने कभी सपने में भी न सोचा था कि गन्ना की यह गति होगी। अफ़सोस, उसकी मौत से तुम्हें बड़ा धक्का पहुँचेगा।"—खलीफ़ा ने कहा।

"मुझ से अधिक आपको धक्का लगा है। आप अबू हसन के बगैर एक घड़ी भी नहीं रह सकते हैं। अगर वह न हो तो आपका मन कैसे लगेगा।" जुबेदा ने कहा।

"खुदा की मेहरबानी से तो वह ठीक है। मृत गन्ना के बारे में तुम्हें अफ़सोस होना चाहिये।"—खलीफ़ा ने कहा।

"अरे गन्ना, और उसका गुज़र जाना! आप क्या कह रहे हैं! कोई हँसेगा। मरा तो अबू है।"—जुबेदा ने कहा।

"तुम्हारी नादानी देखकर मुझे हँसी आती है। लगता है, तुम्हें किसी ने ठीक उल्टी ख़बर बता दी है। मरा अबू नहीं है, गन्ना मरी है।"—खलीफ़ा ने कहा।

"आप ही ने ग़लत ख़बर सुनी है। मरा तो अबू है।" जुबेदा ने कहा।

वे दोनों आपस में मुर्गी और मुर्गे की तरह भिड़ने लगे।

"क्या शर्त है?"—खलीफ़ा ने पूछा।

"क्या शर्त है?"—जुबेदा ने पूछा।

खलीफ़ा ने मसूर को बुलाकर कहा—"तुम तुरन्त अबू के घर जाकर यह मालूम करो कि कौन मरा है, और कौन रो रहा है।"

समाचार वगैरह

समाचार पत्रों की एक खबर से मालूम होता है कि भारत सरकार रूस, चीन और चैकोस्लावेकिया से व्यापार बढ़ाने के लिए जल्दी ही मास्को, पेकिंग और प्राग में भारतीय दूतावासों में वाणिज्य कार्यालय खोलेगी।

* * *

हाल ही में सोवियत वैज्ञानिकों ने कुछ ऐसे मौलिक उपकरण तैयार किये हैं, जिनसे सूर्य का ताप विद्युत-शक्ति में परिणत हो जाता है। प्रथम सूर्य चालित बिजली के द्वारा उत्पन्न की गयी विद्युत-शक्ति को रेगिस्तानों की सिंचाई के लिए पानी निकालने और वितरित करने के काम में लाने की योजना है।

* * *

इधर कुछ दिनों पूर्व प्रधान मंत्री, श्री जवाहरलाल नेहरू जी से मिलने के लिए, आल्वर से ७५ वर्षीय वृद्ध श्री नाथूराम धावन साइकिल पर २०० मील की यात्रा कर दिल्ली गये। श्री नेहरूजी से वे बहुत दिनों से मिलना चाहते थे। उन्होंने भेंट स्वरूप अपने हाथों से बनाया हुआ एक बड़ा ताला श्री नेहरू जी को दिया।

कलकत्ते के आशुतोष म्यूजियम के अधिकारियों ने चालीस परगणा के हरिनारायणपुर में एक ऐसी जगह का पता लगाया है जहाँ दो हज़ार वर्ष पूर्व एक बन्दरगाह था, जहाँ से रोम आदि राज्यों के साथ वाणिज्य-व्यापार हुआ करता था।

* * *

'याडने इलेक्ट्रिक कार्पोरेशन' न्यूयार्क की एक कम्पनी ने ऐसी बैटरी तैयार की है, जो संसार की सब से छोटी बैटरी है। यह डाक टिकट से ज़्यादा बड़ी नहीं है और मोटाई में एक सूत के बराबर है। इसका वज़न लगभग आधा तोला है। इस बैटरी का उपयोग बिजली से चलनेवाली घड़ियों, गुप्त यन्त्रों तथा वायुयानों और फोटोग्राफी में किया जाता है।

* * *

समाचार पत्रों में प्रकाशित एक विवरण से ज्ञात होता है कि भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग ने उत्तर प्रदेश के देहरादून मसूरी क्षेत्र में बढ़िया किस्म के पत्थर का पता लगाया है। इस क्षेत्र में लगभग २५ करोड़ ४० लाख टन चूने का पत्थर आँका गया है।

* * *

दिल्ली विश्व-विद्यालय के विद्यार्थियों का एक सांस्कृतिक प्रतिनिधि-मंडल पिछले महीने अफ़गानिस्तान का दौरा करने के लिए गया। यह प्रतिनिधि मंडल खैबर दर्रा, काबुल, कन्धार, हिरात, जलालाबाद आदि, स्थानों का पर्यटन करेगा।
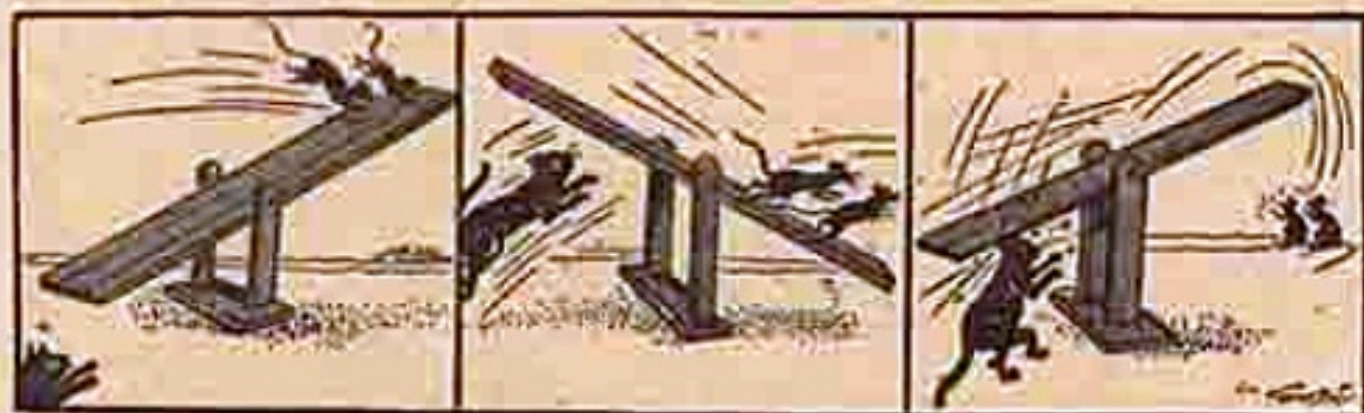
चित्र - कथा
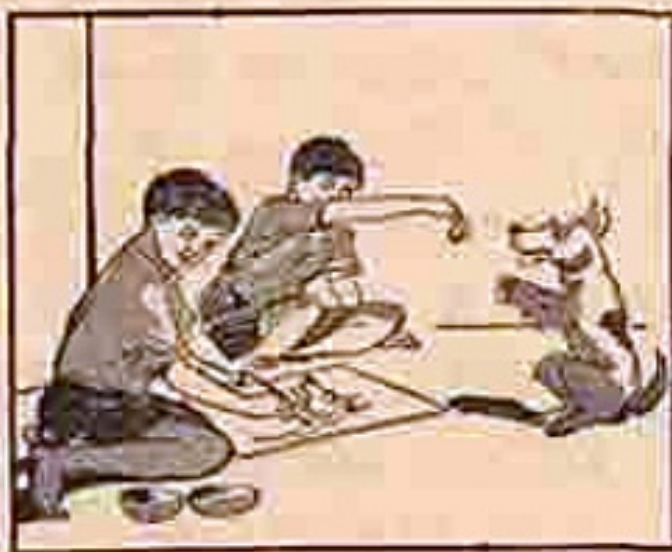
एक दिन, क्लास में मास्टर जी ने चित्र बनाने की प्रतियोगिता चलाई। दास, और वास ने मेहनत करके "टाइगर" का चित्र खींचा। जब उस चित्र को दीवार के सहारे रखकर, दूसरे कमरे में गये, तो "टाइगर" ने आकर उसको पैर से खरोंच दिया। चित्र के रंग इधर उधर मिल गये। इस बीच में मास्टर जी ने पुकारा। सब के साथ दास, वास ने भी अपना चित्र दिखाया। उस चित्र को दूसरे बच्चों को दिखाकर मास्टर जी ने कहा—"देखो, शेर का चित्र इस तरह बनाना चाहिये।" उन्होंने दास और वास की बड़ी प्रशंसा की।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press (Private) Ltd., and Published by him for Chandamama Publications, from Madras 26.—Controlling Editor: SRI "CHAKRAPANI"

ग्राहकों को एक जरूरी सूचना !

ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिये। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न होगा, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकेगा। पता बदल जाने पर तुरन्त नए पते की सूचना देनी चाहिए। यदि प्रति न मिले तो १० वीं तारीख से पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद में आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

व्यवस्थापक, चन्दामामा.

सजावट
में
सौंदर्य
हथकरघे के
वस्त्र
ऑल इंडिया हैंडलूम बोर्ड,

Photo by P. K. Patel

पुरस्कृत परिचयोक्ति

'जो लूट मिले सो मिट्ठे!!'

प्रेषक : श्री आलोक अरोड़ा, लखनऊ

CHANDAMAMA (Hindi) SEPTEMBER 1956 Regd. No. M. 5452